

इकाई क्र. 1

साहित्य और सिनेमा का महत्त्व

- 1.1 उद्देश्य
- 1.2 प्रस्तावना
- 1.3 विषय विवेचन
 - 1.1 साहित्य : स्वरूप विवेचन
 - 1.1.1 साहित्य की परिभाषा
 - 1.1.2 साहित्य के तत्त्व
 - 1.1.3 साहित्य के भेद
 - 1.2 सिनेमा : स्वरूप विवेचन
 - 1.2.1 सिनेमा की परिभाषा
 - 1.2.2 सिनेमा के तत्त्व
 - 1.2.3 सिनेमा के प्रकार
- 1.4 स्वयं – अध्ययन के लिए प्रश्न
- 1.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
- 1.6 स्वयं – अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
- 1.7 सारांश
- 1.8 स्वाध्याय
- 1.9 क्षेत्रीय कार्य
- 1.10 अतिरिक्त अध्ययन हेतु संदर्भ।

1.1 उद्देश :

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- 1. साहित्य की परिभाषा, स्वरूप एवं महत्त्व से परिचित होंगे।
- 2. सिनेमा की परिभाषा, स्वरूप, महत्त्व एवं उपयोगिता से परिचित होंगे।
- 3. साहित्य के तत्त्व एवं भेदों से परिचित होंगे।
- 4. सिनेमा के तत्त्व एवं प्रकारों से परिचित होंगे।
- 5. हिंदी रचनाओं पर बनी फिल्मों का रसग्रहण कर सकेंगे।

1.2 प्रस्तावना :

साहित्य और सिनेमा के मध्य अत्यंत घनिष्ठ एवं अभिन्न संबंध रहा है। दोनों एक-दूसरे के पूरक माध्यम हैं और मानव जीवन की संवेदनाओं, अनुभवों तथा सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त करने का कार्य करते हैं। यदि साहित्य को सृजन की जननी कहा जाए, तो सिनेमा उसकी सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम है। साहित्य और सिनेमा ऐसी विधाएँ हैं, जिन्होंने मानव जीवन, उसकी जीवन-शैली, विचार-प्रक्रिया तथा सामाजिक व्यवहार को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। जनमानस को शिक्षित करने, उसका मनोरंजन करने तथा सामाजिक चेतना का विकास करने में इन दोनों माध्यमों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साहित्य शब्दों के माध्यम से पाठक की कल्पना को जागृत करता है, जबकि सिनेमा उन्हीं भावों और विचारों को दृश्य एवं श्रव्य रूप में सजीव बनाता है। यही कारण है कि सिनेमा का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक व्यापक और तीव्र माना जाता है। सिनेमा एक दृश्य-श्रव्य माध्यम होने के कारण कम समय में लाखों दर्शकों तक अपनी बात पहुँचा सकता है। एक ही समय में विभिन्न सिनेमाघरों अथवा अन्य माध्यमों के द्वारा असंख्य लोग किसी फिल्म को देख सकते हैं। इसके विपरीत साहित्य का प्रभाव अपेक्षाकृत धीमी गति से विकसित होता है, किंतु उसकी वैचारिक गहराई अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। इस प्रकार, साहित्य और सिनेमा दोनों ही मानव जीवन, समाज और संस्कृति पर गहरा तथा स्थायी प्रभाव छोड़ने वाले सशक्त माध्यम हैं।

1.3 विषय विवेचन :

हम क्रमशः साहित्य का स्वरूप, परिभाषा, साहित्य के तत्त्व तथा साहित्य के भेद के साथ ही सिनेमा का स्वरूप, सिनेमा की परिभाषा, सिनेमा के तत्त्व तथा सिनेमा के प्रकारों का विस्तृत विवेचन करेंगे।

1.1 साहित्य : स्वरूप विवेचन

साहित्य शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है। यह शब्द अंग्रेजी के Literature के विकल्प के रूप में प्रचलित हुआ है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जहाँ शब्द और अर्थ, भाव और विचारों का परस्पर सहभाव हो वही साहित्य है। साहित्य में यह सहभाव या समन्वय केवल शब्द और अर्थ का नहीं होता। मूलतः 'साहित्य' शब्द संस्कृत भाषा का है। 'साहित्य' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'सहित' शब्द में यत् प्रत्यय के योग से हुई है। साहित्य = सहित + यत् साहित्य का अर्थ है शब्द और अर्थ का यथावत सहभाव। इसलिए विद्वानों ने साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति सहित मानी है। अर्थात् हित के साथ। साहित्य शब्द का प्रचलन साहित्य के अर्थ में सातवीं-आठवीं शताब्दी में हुआ। इससे पूर्व संस्कृत में साहित्य के स्थान पर 'काव्य' शब्द का प्रयोग होता था। आचार्य भामह, राजशेखर, वामन, कुंतक आदि विद्वानों ने साहित्य के लिए काव्य शब्द का प्रयोग किया है। भारतीय काव्यशास्त्र में साहित्य के स्वरूप पर पर्याप्त मात्रा में विचार-विमर्श हुआ है। जिसके कारण विभिन्न काव्य संप्रदायों का विकास हुआ है।

साहित्य मनुष्य के अनुभवों, विचारों, भावनाओं और कल्पनाओं की सजीव एवं कलात्मक अभिव्यक्ति है। यह भाषा के माध्यम से जीवन के विविध पक्षों को अर्थपूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है। सामान्यतः साहित्य वह रचनात्मक लेखन है जो मन और समाज को संवेदना, सौंदर्य, सत्य और नैतिकता के प्रति जागरूक करता है। दूसरे शब्दों में, साहित्य मानव जीवन का दर्पण है, जो समय, समाज और व्यक्ति के अंतःकरण को शब्दों में पकड़ता है। साहित्य का स्वरूप व्यापक और बहुआयामी होता है। आधुनिक साहित्य नए प्रयोग, नई संवेदना और बदलते सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्यों के साथ संवाद करता है। डिजिटल युग में साहित्य का स्वरूप माध्यमों के

परिवर्तन से और व्यापक हुआ है। ई-पुस्तक, ब्लॉग, पॉडकास्ट, और सोशल मीडिया के जरिए साहित्य नए पाठकों तक पहुँचता है, पर उसका मूल तत्त्व मानवीय अनुभवों की अर्थपूर्ण अभिव्यक्ति अपरिवर्तित रहता है। साहित्य संवेदनशीलता की कोटि में आता है। साहित्य मनुष्य के हृदय को स्पर्श करता है, सुख-दुःख, प्रेम-घृणा, आशा-निराशा जैसे भावों को व्यक्त कर पाठक के भीतर सहानुभूति और करुणा का भाव जागृत करता है। साहित्य के माध्यम से सौंदर्यबोध का विवेचन किया जाता है। साहित्य भाषा, लय, प्रतीक, बिंब और शैली के माध्यम से सौंदर्य का सृजन करता है, जिससे पाठक को रसानुभूति होती है। साहित्य विशेषता: सत्य और यथार्थ के प्रति प्रतिबद्धता होता है। साहित्य जीवन के सत्यों को विविध दृष्टियों से दिखाता है। कभी प्रत्यक्ष यथार्थ के रूप में, कभी रूपक और प्रतीकों के द्वारा ताकि पाठक जीवन को गहराई से समझ सके। अच्छा साहित्य केवल मनोरंजन नहीं करता, बल्कि प्रश्न उपस्थित करता है, विचारों को चुनौती देता है और नए विकल्पों की ओर संकेत करता है। इसके साथ ही साहित्य अपने समय की समस्याओं, आंदोलनों, सांस्कृतिक परिवर्तनों और मनोवैज्ञानिक सच्चाइयों से प्रभावित होता है तथा उन्हें प्रतिबिंबित करता है, जिससे यह ऐतिहासिक दस्तावेज़ की तरह भी महत्त्व रखता है।

साहित्य विभिन्न वर्गों, जातियों, लैंगिक पहचानों और क्षेत्रों की आवाज़ों को स्थान देता है, जिससे समाज का व्यापक चित्र बनता है। साहित्य मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है, सहिष्णुता, न्याय, समानता और स्वतंत्रता जैसे मूल्यों का संवर्धन करता है। साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उसकी तकनीक और संरचना है। कविता में छंद, मुक्तछंद, अनुप्रास, रूपक, उपमा, बिंब और ध्वनि-संयोजन अभिव्यक्ति को सघन बनाते हैं। कथा-साहित्य में कथानक, चरित्र-चित्रण, दृष्टि-कोण, समय-प्रबंधन, संवाद और कथावाचक की स्थिति रचना की गुणवत्ता तय करते हैं। नाटक में दृश्य-निर्माण, निर्देश, मंच-सज्जा, प्रवेश-निकास, संवाद की ऊर्जा और संघर्ष का उभार आवश्यक होता है। निबंध में तर्क-प्रमाण, उदाहरण, भाषा की स्पष्टता और विचार की क्रमबद्धता महत्त्वपूर्ण रहती है। इन सबके बीच साहित्य का मूल लक्ष्य मानवीय अर्थ का सृजन निरंतर बना रहता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में साहित्य की बहुल परंपराएँ हैं। वैदिक ऋचा से लेकर भक्ति-साहित्य तक, शास्त्रीय संस्कृत काव्य से आधुनिक हिंदी-उर्दू रचनाओं तक, लोकधारा से नवजागरण और प्रगतिवाद तक हर काल में साहित्य ने समाज की नब्ज को पकड़कर नई संवेदना दी है। भक्ति में भाव-समर्पण और मानवीय प्रेम का विस्तार दिखता है, रीतिकाल में शृंगार और अलंकार-प्रवणता का सौंदर्य विकसित हुआ, जबकि आधुनिक काल में सामाजिक यथार्थ, औद्योगिकीकरण, स्वतंत्रता-संघर्ष और लोकतांत्रिक मूल्यों ने साहित्य को नए अर्थ दिए। आज का साहित्य बहुधा अंतर्सांस्कृतिक और अंतर्विषयी है, जो मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शन और इतिहास से संवाद करता है।

1.1.1 साहित्य की परिभाषाएं :

भारतीय एवं पाश्चात्य आचार्यों एवं विद्वानों ने साहित्य के प्रमुख तत्त्वों की चर्चा करते हुए साहित्य की परिभाषाओं को निर्धारित करने का प्रयास किया है। कालक्रमानुसार महत्त्वपूर्ण संस्कृत, हिंदी और पाश्चात्य विद्वानों के काव्य लक्षणों का विवेचन और विश्लेषण निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है।

संस्कृत विद्वानों द्वारा साहित्य की परिभाषाएँ :

1. आचार्य भामह :

आचार्य भामह ने 'काव्यालंकार' में काव्य शब्द को सम्मुख रखकर साहित्य को परिभाषित किया है। वे लिखते हैं-

शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्।

अर्थात् शब्द और अर्थ के सहित भाव को काव्य कहते हैं।

इस परिभाषा में सहित शब्द के दो अर्थ हो सकते हैं। 1. साहित्यिक सामंजस्य 2. हित सहित। सहित का पहला अर्थ लिया जाए तो प्रस्तुत परिभाषा का तात्पर्य होगा शब्द और अर्थ के साहित्यिक सामंजस्य को काव्य कहा जाता है। सहित का दूसरा अर्थ लिया जाए तो इस परिभाषा का तात्पर्य ऐसा शब्दार्थ जो लोककल्याणकारी हो, सबका हित करनेवाला हो, वह काव्य है। स्पष्ट है कि आचार्य भामह शब्द और अर्थ के सामंजस्य पर बल देते हैं। इस परिभाषा में 'सहित' शब्द को महत्वपूर्ण मानते हुए डॉ. नगेंद्र लिखते हैं सहित अर्थात् सामंजस्यपूर्ण शब्द अर्थ को काव्य कहते हैं।

२) आचार्य दण्डी :

आचार्य दण्डी अलंकारवादी आचार्य हैं। वे 'काव्यदर्शन' नामक ग्रंथ में काव्य-लक्षण को प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं-

शरीरं तावदिष्टार्थं व्यवच्छिन्ना पदावली।

अर्थात् इष्ट अर्थ को प्रकट करनेवाली पदावली तो उसका शरीर मात्र है। स्पष्ट है कि दण्डी केवल शब्दार्थ को काव्य नहीं मानते क्योंकि उनके अनुसार शब्दार्थ तो काव्य का शरीर मात्र है, उसकी आत्मा नहीं। उन्होंने अलंकार को काव्य की आत्मा माना है।

३) आचार्य मम्मट :

आचार्य मम्मट ने अपने ग्रंथ 'काव्यप्रकाश' में काव्य लक्षण को प्रस्तुत करते हुए लिखा है-

तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृति पुनः क्वापि।

अर्थात् दोष रहित, गुण सहित और अलंकार सहित अथवा रहित शब्दार्थ को काव्य कहा जाता है। प्रस्तुत परिभाषा के आधार पर काव्य के निम्न लक्षण सामने आते हैं।

- i. शब्दार्थौ - अर्थात् काव्य शब्द और अर्थ का योग है।
- ii. अदोषौ - अर्थात् काव्य दोषरहित होना चाहिए।
- iii. सगुणौ - अर्थात् काव्य गुणयुक्त होना चाहिए।
- iv. अनलंकृति पुनः क्वापि - अर्थात् काव्य में अलंकार अनिवार्य नहीं है।

4) आचार्य विश्वनाथ :

आचार्य विश्वनाथ अपने काव्य ग्रंथ 'साहित्यदर्पण' में काव्य लक्षण को प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं-

वाक्य रसात्मकं काव्यम्
अर्थात् रसयुक्त वाक्य काव्य है।

विश्वनाथ रसवादी आचार्य होने के कारण उन्होंने रस को प्रधानता दी है। किंतु रस की सत्ता स्वीकार कर लेने के बाद अन्य सभी तत्त्व उनके लिये गौण हो जाते हैं।

5) आचार्य पंडितराज जगन्नाथ :

आचार्य पंडितराज जगन्नाथ संस्कृत काव्यशास्त्र परम्परा के अंतिम आचार्य हैं। उन्होंने अपने ग्रंथ 'रसगंगाधर' में काव्य लक्षण को निम्न शब्दों में प्रस्तुत किया है-

रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।
अर्थात् रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करनेवाला शब्द ही काव्य है।

प्रस्तुत परिभाषा पर कुछ विद्वान् आपत्ति उठाते हुए कहते हैं कि काव्य के अंतर्गत शब्द में सदैव अर्थ की रमणीयता होना असंभव है, पूरे वाक्य में रमणीयता प्रतिपादित होती है। अतः रमणीय अर्थ देनेवाला वाक्य, काव्य होना चाहिए। यह लक्षण पर्याप्त सरल और सुबोध है। इसी बात को ध्यान में रखकर डॉ. भगीरथ मिश्र ने इस लक्षण को निम्न रूप में प्रस्तुत किया है-शब्द अर्थ अथवा दोनों की रमणीयता से युक्त वाक्य रचना को 'काव्य' कहते हैं।

प्राचीन हिंदी आचार्यों के द्वारा साहित्य की परिभाषाएं :

संस्कृत के आचार्यों की तरह प्राचीन हिंदी आचार्यों ने भी साहित्य की परिभाषाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, जो निम्नवत् हैं-

1) आचार्य केशवदास :

केशवदास अलंकारवादी आचार्य हैं। अलंकार विहिन कविता को वे शोभारहित नारी के समान मानते हैं। वे लिखते हैं-

यद्यपि जाति सुलच्छनीः सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिना न सोहई, कविता बनिता मित्त॥

अर्थात् उत्तम जाति, अच्छे लक्षणों, सुंदर वर्ण (रंग और अक्षर) रसयुक्त और अच्छे वृत्त (छंद और चरित्र) वाली होने पर भी कविता और वनिता भूषण (अलंकार, गहने) बिना सुशोभित नहीं होती। केशवदास के विचार से रस, छंद और शब्द सौंदर्य के साथ अलंकार का होना आवश्यक है। उन पर भामह, दण्डी आदि अलंकारवादी आचार्यों का प्रभाव है। अतः केशवदास की परिभाषा अव्याप्ति दोष से युक्त है।

2) आचार्य चिंतामणि :

चिंतामणि ने अपने ग्रंथ 'कविकुलकल्पतरू' में 'काव्यप्रकाश' ग्रंथ के आधार पर अपनी परिभाषा प्रस्तुत की है। वे लिखते हैं-

सगुन अलंकारन सहित, दोषरहित जो होइ।

शब्द अर्थ वारी कवित, बिबुध कहत सब कोई॥

अर्थात् गुण एवं अलंकार से युक्त और दोष से मुक्त अर्थपूर्ण शब्द-रचना को काव्य कहते हैं।

आचार्य मम्मट ने 'काव्यप्रकाश' में अलंकार की अनिवार्यता नहीं मानी है, किंतु इसमें अलंकार को अनिवार्य माना गया है। अतः यह लक्षण हेमचंद्र के लक्षण से अधिक साम्य रखता है। हेमचंद्र ने अलंकार को अनिवार्य माना है। चिंतामणि ने भी अलंकार की अनिवार्यता पर विशेष बल दिया है।

3) आचार्य कुलपति मिश्र :

आचार्य कुलपति मिश्र ने अपने ग्रंथ 'रस-रहस्य' में आ. विश्वनाथ के काव्य लक्षण का खण्डन करते हुए मौलिक उद्भावना की है। वे लिखते हैं-

जगते अद्भुत सुख सदन, शब्दरू अर्थ कवित्त।

यह लच्छन मैंने कियो, समुझि ग्रंथ बहुचित्त ॥

अर्थात् संसार में विलक्षण आनंद देनेवाले शब्द और अर्थ को काव्य कहा जाता है।

आ. कुलपति ने केवल शब्द और अर्थ के योग को काव्य न कहकर विलक्षण आनंद या सुख देनेवाली रचना को काव्य कहा है। लेकिन संसार में विलक्षण आनंद कैसे समझा जाय? यह प्रश्न है। अतः यह लक्षण अस्पष्ट है। प्रस्तुत परिभाषा पर संस्कृत के आचार्य विश्वनाथ का प्रभाव दिखाई देता है।

आधुनिक हिंदी विद्वानों द्वारा साहित्य की परिभाषाएँ :

आधुनिक हिंदी विद्वानों की परिभाषाओं पर अधिकांश मात्रा में संस्कृत तथा पाश्चात्य काव्य लक्षणों का प्रभाव दिखाई देता है। फिर भी कुछ काव्य-लक्षण महत्वपूर्ण हैं, जिसका विवेचन निम्नवत है-

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल :

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने निबंध संग्रह 'चिंतामणि' भाग एक के निबंध 'कविता क्या है' में काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस दशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मानना है कि कविता का जन्म हृदय की मुक्तावस्था में होता है। स्पष्ट है कि काव्य का यह लक्षण पूर्ण तथा व्यापक नहीं कहा जा सकता है।

2) सुमित्रानंदन पंत :

छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं काव्य हमारे परिपूर्ण क्षणों की वाणी है। स्पष्ट है कि काव्य मानव-हृदय की परिपूर्ण, आनंदमय एवं श्रेष्ठ अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति है।

3) डॉ. श्यामसुंदर दास :

डॉ. श्यामसुंदर दास काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- काव्य वह है जो हृदय में अलौकिक आनंद व चमत्कार की सृष्टि करें। संक्षेप में डॉ. श्यामसुंदर दास ने काव्य में रस, ध्वनि और अलंकार को समाहित करने का प्रयास किया है।

4) डॉ. नगेन्द्र :

डॉ. नगेन्द्र काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं उदात्त भावों की निश्छल अभिव्यक्ति का नाम काव्य है। स्पष्ट है कि डॉ. नगेन्द्र ने उच्च, श्रेष्ठ और निष्कपट भावों की कलात्मक अभिव्यक्ति को काव्य कहा है।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा साहित्य की परिभाषाएँ :

पाश्चात्य विद्वानों ने काव्य/साहित्य के लिए कल्पना, बुद्धि, भाव और शैली तत्त्व की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए काव्य के लक्षण निर्धारित किए हैं, जो निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है-

1. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका :

प्रस्तुत अंग्रेजी कोश में काव्य को परिभाषित करते हुए लिखा है-

Poetry is art work of the Poet

अर्थात् कवि का कार्य कला काव्य है।

यह परिभाषा अस्पष्ट है। पहले कवि को समझा जाए और बाद में उसके कार्य को काव्य कहा जाए। कवि के माध्यम से कविता की परिभाषा उचित और स्पष्ट नहीं है।

2. वर्ड्सवर्थ :

वर्ड्सवर्थ काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं Poetry is the Spontaneous overflow of powerful feelings, it takes its origin from emotions recollected in tranquility. अर्थात् कविता उत्कट भावनाओं का सहज उद्रेक है, जिसकी उत्पत्ति शांति में संचित अनुभूतियों से होती है। दूसरे शब्दों में काव्य शांति के क्षणों में स्मरण किए गए प्रबल मनोवेगों का सहज उद्रेक है।

वर्ड्सवर्थ की परिभाषा तथ्यपूर्ण है, क्योंकि यह भावानुभूति और अभिव्यक्ति की प्रक्रिया को स्पष्ट करती है। इस लक्षण में भी आपत्ति उठाई जा सकती है। शांति के समय में सभी अपने मनोवेगों का स्मरण करते हैं और अपने प्रबल भावों को प्रकट करते हैं, क्या वह सब काव्य हो जाता है? यहां पर अभिव्यक्ति कला और उसके प्रभाव का उल्लेख नहीं है। हम अपने सुख-दुःखपूर्ण क्षणों का स्मरण कर हंसते हैं और रोते हैं, पर सभी का वह उल्लास और विलाप सदैव कविता नहीं बन जाती। कविता के लिए उस सहज अभिव्यक्ति में सौंदर्य, संयम और

प्रभाव की आवश्यकता है; परंतु इसमें संदेह नहीं कि प्रतिभा और अभिव्यक्ति कौशल से युक्त कवियों की काव्याभिव्यक्ति की प्रक्रिया यहां पर आवश्यक स्पष्ट हुई है।

अंततः, साहित्य की परिभाषा केवल शब्दों में नहीं, उसके प्रभाव में भी निहित है। साहित्य मनुष्य को चिंतनशील बनाता है, संवेदनशीलता का विकास करता है और समाज को बेहतर दिशा देने की क्षमता रखता है। उसका स्वरूप जितना व्यापक है, विशेषताएँ उतनी ही समृद्ध हैं। यही कारण है कि साहित्य शिक्षा का मूलाधार है और मानव सभ्यता का सर्जनात्मक अभिलेख भी।

1.1.2 साहित्य के तत्त्व :

भारतीय साहित्यशास्त्र में साहित्य के तत्त्वों पर पर्याप्त विचार-विमर्श किया है। साहित्य अथवा काव्य को समाज का संचित प्रतिबिंब माना गया है। यह मानव-जीवन और समाज की अनुभूतियों, विचारों तथा यथार्थ स्थितियों का कलात्मक चित्र प्रस्तुत करता है। इसी कारण साहित्य को जीवन की आलोचना भी कहा जाता है, क्योंकि उसमें समाज और जीवन का वास्तविक स्वरूप अभिव्यक्त होता है। पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में विंचेस्टर ने सर्वप्रथम साहित्य के मूल विधायक तत्त्वों का उल्लेख किया है। उन्होंने काव्य में चार प्रमुख तत्त्वों की सत्ता स्वीकार की हैं, 1) भाव तत्त्व 2) कल्पना तत्त्व 3) बुद्धि तत्त्व 4) शैली तत्त्व आदि। वास्तव में इन्हीं तत्त्वों के कारण काव्य अथवा साहित्य को सौंदर्य, प्रभावशीलता और पूर्णता प्राप्त होती है। इसलिए उत्कृष्ट साहित्य की रचना के लिए इन चारों तत्त्वों का संतुलित समन्वय आवश्यक माना गया है। साहित्य के तत्त्वों का विस्तृत विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है-

1. भाव तत्त्व (Element of Emotion):

भारतीय आचार्यों ने भाव तत्त्व को साहित्य में अनिवार्य तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है। भाव तत्त्व साहित्य में सबसे अधिक प्रभाव उत्पन्न करने वाला साहित्य का प्राणतत्त्व है। भाव ही साहित्यकार की कल्पना का प्रेरक है। साहित्य के निर्माण के मूल में साहित्यकार के हृदय का भाव ही कार्य करता है। मूलतः साहित्यकार संवेदनशील होने के कारण उनके हृदय में अनेक भाव जागृत होते हैं। इन तीव्र भावों से ही साहित्य का निर्माण होता है। प्रसिद्ध पाश्चात्य कवि विलियम वर्ड्सवर्थ साहित्य में भावों के योगदान को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं- काव्य प्रबल संवेदना का सहज उद्रेक है। स्पष्ट है कि भावों की सृष्टि साहित्यकार करता है। भाव के आधार पर ही साहित्य आकार ग्रहण करता है। भाव जितना अच्छा होगा साहित्य भी उतना ही अच्छा होगा। भाव तत्त्व के अभाव से साहित्य निष्प्राण एवं नीरस होता है। शब्द, अर्थ और कल्पना भाव को साकार रूप प्रदान करते हैं। भाव तत्त्व का संबंध रस से है। भरतमुनि के अनुसार रस की उत्पत्ति भावों से होती है। भाव में कवि की आत्मानुभूति प्रकट होती है। भाव तत्त्व का संबंध सीधे हृदय से है। भावपूर्ण अनुभूति ही पाठक को प्रभावित करती है। भाव तत्त्व की रागात्मकता के कारण साहित्य में रस, आनंद और सुन्दरता को पिरोया जा सकता है। महादेवी वर्मा ने लिखा है-अनुभूति अपनी सीमा में जितनी प्रबल होती है, उतनी बुद्धि नहीं हमारे स्वयं जलने की हल्की अनुभूति भी दूसरे के राख हो जाने के ज्ञान से अधिक स्थायी रहती है। कवि को अपनी अनुभूति को रमणीयता के साथ व्यक्त करना पड़ता है। तभी उसमें सर्वोच्च आनंद की प्राप्ति होती है। लोक गीत और गीति काव्यों में भाव तत्त्व की प्रधानता होती है, इसी कारण वे लोकप्रिय होते हैं। भाव तत्त्व ही काव्य को सरस बनाता है। भावों की व्यापकता, गहनता और सूक्ष्मता को कवि अभिव्यक्त करता है। इसीलिए भाव तत्त्व के अभाव में काव्य की निर्मिती करना असंभव है। मनुष्य के मन के स्थायी भाव साहित्य में रस के रूप में आते हैं। यह स्थायी भाव प्रत्येक व्यक्ति के मन में होते हैं।

संस्कृत के सभी आचार्यों ने साहित्य सृजन की प्रक्रिया में भाव तत्त्व को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। किसी कवि की अभिव्यक्ति ही हमें सर्वाधिक प्रभावित करती है जो अपने आप में भावपूर्ण होती है। डॉ. भगीरथ मिश्र लिखते हैं- काव्य में भाव-तत्त्व सबसे अधिक प्रभाव उत्पन्न करनेवाला होता है। भाव कवि की कल्पना का प्रेरक है तथा भाव को साकार रूप देनेवाले शब्द, अर्थ और कल्पना है। अतः रागात्मक तत्त्व या भाव तत्त्व के बिना काव्य सृजन प्रक्रिया की कल्पना ही नहीं की जा सकती। भारतीय आचार्यों ने रस का संबंध भावों से स्वीकार किया है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य में रस की प्रधानता को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि वाक्यं रसात्मकं काव्यम्। अर्थात् भावों के बिना रस नहीं और रस के बिना साहित्य नहीं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भावों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि अन्तःकरण की वृत्तियों के चित्र का नाम कविता है। स्पष्ट है कि अन्तःकरण की वृत्तियों का संबंध रसदशा अर्थात् भावनात्मकता से है। साहित्य में भाव जितने गहरे होते हैं उतना ही उसका असर गहरा होता है। साहित्य में स्पष्टता, औचित्य विविधता और व्यापकता का आगमन भावों के कारण ही होता है। भाव तत्त्व साहित्य के सभी विधाओं में व्याप्त है। पाठकों के हृदय और मस्तिष्क पर भावपूर्ण साहित्य अत्यंत गहरा प्रभाव डालता है। जैसे -

आजा रे कागो, चुन-चुन खायो मेरा मास।
दो नयनन मत खायो, पिया मिलन की आस॥

उपर्युक्त पंक्तियों में एक घायल युवती की करुण अवस्था तथा अपने प्रियतम से मिलने की तीव्र आकांक्षा अत्यंत मार्मिक रूप में व्यक्त हुई है। वह कौए से अपने शरीर का मांस खाने की अनुमति तो देती है, किंतु अपनी आँखों को न खाने की विनती करती है, क्योंकि उनमें अभी भी प्रिय-मिलन की आशा जीवित है। यही भावुकता और करुण अनुभूति पाठक के मन को गहराई से स्पर्श करती है। ऐसी भाव-संपन्न अभिव्यक्ति से पाठक सहज ही प्रभावित और भाव-विभोर होता है।

भावों को सामान्यतः तीन भागों में विभाजित किया जाता है। जैसे इंद्रियातीत अथवा सामान्य भाव, प्रज्ञात्मक अथवा संचारी भाव तथा गुणात्मक या सौंदर्य-बोध से संबंधित भाव। काव्य में भाव का स्थान अत्यंत व्यापक और महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि यही तत्त्व पाठक और श्रोता के मन का संस्कार करता है। भावों के माध्यम से साहित्य केवल मनोरंजन नहीं करता, बल्कि मानव-हृदय को संवेदनशील और परिष्कृत भी बनाता है। काव्य में सरसता, प्रभावशीलता और सहजता बनाए रखने के लिए भावों में विविधता का होना अत्यंत आवश्यक है। भावों की बहुलता ही काव्य को जीवंत और आकर्षक बनाती है। इसी कारण आचार्य भरतमुनि ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ नाट्यशास्त्र में भावों को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया है - 1) स्थायी भाव 2) संचारी भाव। गीतिकाव्य में भावात्मकता की प्रधानता अधिक मात्रा में दिखाई देता है, क्योंकि उसमें कवि अपने अंतर्मन की अनुभूतियों और संवेदनाओं को अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त करता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भाव-तत्त्व काव्य में 'शिव' अर्थात् कल्याणकारी और मानवीय मूल्यों की रक्षा करता है।

2. कल्पना तत्त्व (Element of Imagination):

'कल्पना' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है- 'सृष्टि करना' अथवा 'सृजन करना'। साहित्य में सौंदर्य और रूप-सृष्टि करने वाली शक्ति को कल्पना कहा जाता है। अंग्रेजी में इसका पर्याय 'Imagination' है, जिसका निर्माण 'खारसश' शब्द से हुआ है। 'Image' का अर्थ 'मानसिक बिंब' या 'चित्र' है। इस प्रकार कल्पना वह शक्ति है, जो साहित्यकार के मन में विविध चित्रों और भावों का निर्माण करती है। साहित्य में 'सुन्दरम्' की प्रतिष्ठा

का मुख्य श्रेय कल्पना-तत्त्व को ही प्राप्त है। कल्पना के माध्यम से साहित्यकार अतीत और भविष्य के दृश्यों, घटनाओं तथा अनुभूतियों का सजीव साक्षात्कार कराता है। यही शक्ति साधारण वस्तुओं को असाधारण बनाती है और अमूर्त भावों को मूर्त रूप प्रदान करती है। साहित्यकार अपनी कल्पना के सहारे उन वस्तुओं और स्थितियों को भी आकार देता है, जो प्रत्यक्ष रूप में दिखाई नहीं देती है। कल्पना तत्त्व के महत्त्व को स्वीकार करते हुए जॉन रस्किन लिखते हैं- कविता कल्पना के द्वारा मनोवेगों के लिए रमणीय क्षेत्र प्रस्तुत करती है। वास्तव में, कल्पना ही साहित्य को आकर्षक, प्रभावपूर्ण और सौंदर्यपूर्ण बनाती है। यही कारण है कि बिना कल्पना के साहित्य की सर्जात्मकता अधूरी मानी जाती है। कल्पना मन की उस शक्ति को कहते हैं जिसके द्वारा साहित्यकार अप्रत्यक्ष अथवा अमूर्त वस्तुओं को चित्रित करता है और पाठक के सम्मुख उपस्थित करता है। साहित्य सृजन की प्रक्रिया में कल्पना को असाधारण महत्त्व है। भावों को रूप और आकार प्रदान करने का कार्य कल्पना ही करती है। मानव-हृदय में उत्पन्न सूक्ष्म अनुभूतियाँ और अमूर्त भाव कल्पना के माध्यम से ही मूर्त तथा सजीव बन पाते हैं। सुप्रसिद्ध अंग्रेजी कवि और नाटककार विलियम शेक्सपियर के अनुसार कवि अपनी कल्पना-शक्ति के द्वारा अज्ञात और अदृश्य वस्तुओं को भी आकार प्रदान करता है। अर्थात् कल्पना ही भाव-जगत को रूप-सृष्टि में परिवर्तित करने का कार्य करती है। साहित्य को रमणीय, प्रभावपूर्ण और आकर्षक बनाने में कल्पना का अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। साहित्य में चमत्कार, नवीनता और सौंदर्य की सृष्टि कल्पना के द्वारा ही संभव होती है। कल्पना के सहारे कवि साधारण वस्तुओं और घटनाओं को भी नवीन रंगों, बिंबों और कलात्मक सौंदर्य से युक्त करता है। यही कारण है कि कल्पना काव्य को केवल विचारात्मक न बनाकर भावपूर्ण और कलात्मक भी बनाती है।

कवि-कल्पना के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए डॉ. श्यामसुंदर दास लिखते हैं विज्ञान में जो बुद्धि है, दर्शन में जो दृष्टि है, वही कविता में कल्पना है। इस कथन से स्पष्ट होता है कि कल्पना काव्य की मूल प्रेरक शक्ति है। कल्पना-तत्त्व का कार्य जीवन के विविध दृश्यों, अनुभूतियों और भावों को सजीव रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करना है। यही शक्ति कवि के विचारों को विस्तार देती है तथा पाठक के मन में नवीन संवेदनाओं और चिंतन को जागृत करती है। वास्तव में कल्पना का सामर्थ्य ही साहित्यकार की प्रतिभा का परिचायक होता है। साहित्यकार अपनी कल्पना के सहारे साधारण घटनाओं और वस्तुओं को भी असाधारण रूप प्रदान करता है। उसकी दृष्टि सामान्य मनुष्य की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म और व्यापक होती है। इसलिए वह उन सौंदर्य-तत्त्वों और अनुभूतियों को भी देख लेता है, जो सामान्य दृष्टि से ओझल रहती हैं। कल्पना में रसात्मकता की प्रतिष्ठा अत्यंत आवश्यक मानी जाती है, क्योंकि रस के अभाव में कल्पना केवल विचार मात्र बनकर रह जाती है। जब कल्पना भाव और रस से संयुक्त होती है, तभी साहित्य प्रभावपूर्ण, मार्मिक और सौंदर्यपूर्ण बनता है। इसी संदर्भ में यह प्रसिद्ध कहावत पूर्णतः सार्थक प्रतीत होती है- जो न देखे रवि, वह देखे कवि। अर्थात् कवि अपनी कल्पना-शक्ति के माध्यम से उन सूक्ष्म और अदृश्य सत्तों का भी साक्षात्कार करता है, जिन्हें सामान्य व्यक्ति नहीं देख पाता है।

कल्पना तत्त्व का महत्त्वपूर्ण कार्य मानव-जीवन के विविध दृश्यों और अनुभूतियों को सजीव रूप में प्रस्तुत करना है। कल्पना में विचारों को उत्तेजित करने तथा भावों को प्रभावपूर्ण बनाने की अद्भुत शक्ति होती है। बिहारी ने कल्पना के सहारे विरहिणी नायिका की प्रिय-मिलन के लिए आकुल-व्याकुल स्थिति का अत्यंत मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं-

इत तै उत तैं इतै, छिनु न कहूँ ठहराति।

रूख न परति, चकरी भई फिर आवति फिर जाति॥

उपर्युक्त पंक्तियों में विरहिणी नायिका की बेचैनी और चंचल मनःस्थिति को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है। वह एक स्थान पर ठहर नहीं पाती और चकरी की भाँति इधर-उधर घूमती रहती है। यह चित्रण कवि की सशक्त कल्पना-शक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण है। कवि की सृजनात्मक शक्ति का आधार कल्पना ही होती है। कल्पना के बल पर वह एक नई, सुंदर और चमत्कारिक दुनिया का निर्माण करता है। कल्पना काव्य को केवल वर्णनात्मक न बनाकर उसे भावपूर्ण, सौंदर्ययुक्त और रसात्मक बनाती है। इसलिए कल्पना में रसात्मकता की प्रतिष्ठा अत्यंत आवश्यक मानी जाती है, क्योंकि रस से संयुक्त कल्पना ही पाठक के हृदय को गहराई से प्रभावित करती है।

3. बुद्धि तत्त्व (Element of Intellect):

साहित्य में भाव और कल्पना के साथ-साथ विचारों का औचित्य भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी दृष्टि से साहित्य में बुद्धि-तत्त्व का विशेष स्थान स्वीकार किया है। साहित्यकार अपनी रचना किसी विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर करता है। वह अपने साहित्य के माध्यम से पाठकों तक कोई संदेश, आदर्श या जीवन-दृष्टि पहुँचाना चाहता है। इस संदेश और प्रयोजन की अभिव्यक्ति जिन विचारों के माध्यम से होती है, वही साहित्य में बुद्धि-तत्त्व कहलाते हैं। बुद्धि-तत्त्व साहित्य को सुसंगत, तर्कपूर्ण और प्रभावशाली बनाता है। यह भाव और कल्पना को उचित दिशा प्रदान करता है तथा उन्हें यथार्थ और सत्य से जोड़ने का कार्य करता है। यदि साहित्य में केवल भावुकता और कल्पना ही हो, परंतु विचारों की स्पष्टता न हो, तो रचना प्रभावहीन हो सकती है। इसलिए साहित्य में बुद्धि तत्त्व का समावेश आवश्यक माना गया है। यह भी सत्य है कि साहित्य में बुद्धि तत्त्व विशुद्ध या शुष्क रूप में उपस्थित नहीं होता, बल्कि वह भाव और कल्पना के साथ समन्वित होकर आता है। बुद्धि तत्त्व के कारण साहित्य में औचित्य और संतुलन का विकास होता है। यही तत्त्व साहित्यकार को एक निश्चित दिशा और उद्देश्य प्रदान करता है। भावनाओं को प्रभावपूर्ण तथा सुचारु रूप में प्रस्तुत करने में भी बुद्धि-तत्त्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बुद्धि के नियंत्रण और संयोजन से ही भावों की अभिव्यक्ति मर्यादित, सुसंस्कृत और प्रभावकारी बनती है। इस प्रकार साहित्य में भाव, कल्पना और बुद्धि आदि तीनों तत्त्वों का संतुलित समन्वय आवश्यक है।

बुद्धि को विचार तत्त्व भी कहा जाता है। भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने विचार अथवा बुद्धि तत्त्व को साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग स्वीकार किया है। साहित्य में औचित्य, संतुलन और तार्किकता बनाए रखने का महत्वपूर्ण कार्य बुद्धि तत्त्व ही करता है। यही तत्त्व साहित्य को उद्देश्यपूर्ण तथा प्रभावशाली बनाता है। साहित्य में कथा संगठन, कथानक के अनुरूप पात्रों का चयन तथा उनके चरित्र-चित्रण में उचित-अनुचित, समय-सापेक्षता और परिस्थितियों का ध्यान रखना बुद्धि तत्त्व का प्रमुख कार्य है। बुद्धि तत्त्व यह सुनिश्चित करता है कि साहित्य की घटनाएँ, पात्र और विचार स्वाभाविक तथा विश्वसनीय प्रतीत हों। विचार और बुद्धि के अभाव में किया गया कोई भी कथन अपरिपक्व, असंगत और हास्यास्पद प्रतीत होता है। जिस प्रकार मानव शरीर में रीढ़ की हड्डी का महत्व होता है, ठीक उसी प्रकार काव्य में बुद्धि तत्त्व का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। यह काव्य को स्थिरता, गंभीरता और दिशा प्रदान करता है। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि काव्य में भाव, कल्पना और विचार इन तीनों तत्त्वों के संतुलित समन्वय से ही उत्कृष्ट, प्रभावकारी जीवनोपयोगी और परिपूर्ण काव्य की रचना संभव होती है।

४. शैली तत्त्व (Element of Style of Expression) :

शैली-तत्त्व को शब्द तत्त्व भी कहा जाता है। साहित्यकार जिस ढंग से तथा जिन शब्दों के माध्यम से अपने भावों, कल्पनाओं और विचारों को अभिव्यक्त करता है, उसे शैली कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, अभिव्यक्ति की विशिष्ट पद्धति ही शैली कहलाती है। प्रत्येक साहित्यकार की शैली उसकी व्यक्तिगत विशेषता और रचनात्मक प्रतिभा की परिचायक होती है। भाव, कल्पना और बुद्धि तत्त्व साहित्य के भाव-पक्ष से संबंधित माने जाते हैं, जबकि शैली तत्त्व का संबंध साहित्य के कला-पक्ष से होता है। शैली ही साहित्य को सौंदर्य, प्रभाव और आकर्षण प्रदान करती है। इसी कारण इसे साहित्य का 'शरीर' कहा गया है। जिस प्रकार शरीर के बिना आत्मा की अभिव्यक्ति संभव नहीं, ठीक उसी प्रकार शैली के बिना भावों और विचारों की प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति संभव नहीं होती है। साहित्य-सृजन की प्रक्रिया में शैली का महत्त्व भाव के समान माना गया है। शैली को भावों का 'परिधान' भी कहा जाता है, क्योंकि वही भावों को सुंदर, सजीव और प्रभावशाली रूप प्रदान करते हैं। अभिव्यक्ति की रमणीयता, मधुरता और कलात्मकता शैली तत्त्व पर ही निर्भर करती है। अतः स्पष्ट है कि शैली साहित्य का अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, जो काव्य को कलात्मक सौंदर्य और प्रभावशीलता प्रदान करता है।

शैली के आधार पर कवि की तीन अवस्थाएँ निर्धारित की गई हैं - 1) प्रारंभिक अवस्था 2) प्रयोग अवस्था 3) प्रौढ़ अवस्था आदि। प्रारंभिक अवस्था में कवि की शैली सरल और अनुकरणप्रधान होती है। प्रयोग अवस्था में कवि नवीन अभिव्यक्ति और शब्द-प्रयोगों का प्रयास करता है, जबकि प्रौढ़ अवस्था में उसकी शैली परिपक्व, प्रभावपूर्ण और मौलिक बनती है। शैली के आंतरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार के गुणों की आवश्यकता होती है। आंतरिक गुणों में भावों की स्पष्टता, संगति और प्रभावशीलता आती है, जबकि बाह्य गुणों में शब्द-सौंदर्य, अलंकार, मधुरता तथा भाषा की कलात्मकता सम्मिलित होती है। साहित्यकार को सुंदर, रोचक और आकर्षक बनाने में शैली का अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। भारतीय काव्यशास्त्र में शैली का समानार्थक शब्द 'रीति' को माना जाता है। आचार्य वामन ने विशिष्ट पद-रचना को 'रीति' कहा है। उनके अनुसार शब्दों की विशेष रचना और विन्यास ही साहित्य को उत्कृष्ट बनाते हैं। साहित्य में बुद्धि तत्त्व सत्य और 'शिव' अर्थात् कल्याण की रक्षा करता है, जबकि कल्पना, भाव और शैली-तत्त्व 'सुन्दरम्' की सृष्टि करते हैं। शैली ही साहित्य को कलात्मक सौंदर्य और प्रभाव प्रदान करती है। वर्तमान युग में शैली के अनेक प्रकार माने जाते हैं, जिनमें प्रमुख हैं- सरस शैली, ललित शैली, क्लिष्ट शैली, मधुर शैली, उदात्त शैली, हास्य-व्यंग्य शैली आदि। इन विभिन्न शैलियों के माध्यम से साहित्यकार अपने भावों और विचारों को विविध रूपों में प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भाव तत्त्व, कल्पना तत्त्व, बुद्धि तत्त्व और शैली तत्त्व इन सभी के संतुलित एवं समन्वित रूप से ही उत्कृष्ट साहित्य का निर्माण होता है। भाव साहित्य को संवेदनशीलता प्रदान करता है, कल्पना उसे सौंदर्य और नवीनता देती है, बुद्धि तत्त्व उसमें औचित्य और दिशा का समावेश करता है जबकि शैली तत्त्व अभिव्यक्ति को कलात्मक और आकर्षक बनाता है। उपर्युक्त चारों तत्त्वों के समन्वय से ही काव्य प्रभावपूर्ण, सरस और सजीव बनता है। यदि इनमें से किसी एक भी तत्त्व का अभाव हो जाए, तो साहित्य अपनी पूर्णता खो देता है। ऐसे काव्य में न तो रसात्मकता रहती है, न सौंदर्य और न ही प्रभावशीलता। इसलिए इन चारों तत्त्वों के बिना काव्य नीरस, प्रभावहीन और मृतवत प्रतीत होता है।

1.1.3 साहित्य के भेद :

साहित्य को उसके स्वरूप, विषय-वस्तु, शैली तथा उद्देश्य के आधार पर विभिन्न भागों में वर्गीकृत किया जाता है। यह वर्गीकरण साहित्य की प्रकृति, अभिव्यक्ति तथा रचनात्मक विशेषताओं को समझने में सहायक होता है। सामान्यतः साहित्य के दो प्रमुख भेद माने जाते हैं, जिनके अंतर्गत अनेक उपभेदों का समावेश होता है। प्रत्येक साहित्य प्रकार की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ, अभिव्यक्ति की शैली तथा साहित्यिक महत्ता होती है। इन भेदों के माध्यम से साहित्य मानव जीवन, मानवीय मूल्य, समाज, संस्कृति और विचारों का विविध रूपों में चित्रण करता है। साहित्य के इन प्रमुख भेदों की विस्तृत चर्चा निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत की गई है-

अ) दृश्य साहित्य :

जिस साहित्य का आस्वादन मंच पर उसके अभिनय को देखकर किया जाता है, उसे दृश्य साहित्य कहा जाता है। इसमें साहित्य के कथानक, पात्रों और घटनाओं को अभिनय, संवाद, संगीत तथा रंगमंचीय प्रस्तुति के माध्यम से दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार का काव्य दर्शकों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है और उन्हें सौंदर्यात्मक आनंद प्रदान करता है। आधुनिक संदर्भ में केवल 'दृश्य साहित्य' कहना पर्याप्त नहीं माना जाता, क्योंकि नाटक और एकांकी जैसे रूपों का आनंद सुनकर भी लिया जा सकता है। इसलिए आज इसे दृक-श्रव्य साहित्य कहना अधिक उपयुक्त है। नाटक, एकांकी, गीतिनाट्य आदि दृश्य साहित्य के प्रमुख रूप हैं। जिसका विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है-

1. नाटक :

रंजनात्मक साहित्यिक विधाओं में नाटक का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह रूपक का सर्वाधिक प्रसिद्ध और प्रभावशाली भेद माना जाता है। प्रभावोत्पादकता की दृष्टि से नाटक को साहित्य की सर्वोत्तम विधाओं में स्थान प्राप्त है। संस्कृत आचार्यों ने नाटक को काव्य का ही एक महत्वपूर्ण रूप माना है। इस संदर्भ में एक प्रसिद्ध उक्ति उल्लेखनीय है- काव्येषु नाटकं रम्यं, तत्र रम्या शकुन्तला। अर्थात् काव्यों में नाटक सर्वाधिक रमणीय है और नाटकों में शकुन्तला श्रेष्ठ मानी गई है। संस्कृत नाटकों में प्रायः पद्यात्मक संवादों का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता था। रीतिकाल तथा आधुनिक काल के प्रारंभिक चरण में लिखे गए अधिकांश नाटक पूर्णतः पद्यात्मक थे अथवा उनमें गद्य और पद्य दोनों का समन्वय देखने को मिलता है। जयशंकर प्रसाद के नाटकों में भी गीतों की प्रचुरता देखने को मिलती है। अभिनय नाटक का अनिवार्य अंग है, जबकि संवाद उसकी आत्मा मानी जाती है। भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार वार्तालाप, संगीत, नृत्य, वेशभूषा, कथावस्तु और अभिनय के समन्वित रूप को नाटक कहा जाता है। भारतीय काव्यशास्त्र में कथानक, पात्र एवं चरित्र-चित्रण, रस, उद्देश्य तथा अभिनय आदि नाटक के पाँच प्रमुख तत्त्व स्वीकार किए गए हैं। दूसरी ओर, पाश्चात्य नाट्यशास्त्र में कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, संवाद, देशकाल एवं वातावरण, उद्देश्य, भाषा-शैली तथा अभिनय को नाटक के सात प्रमुख तत्त्वों के रूप में स्वीकार किया है।

2. एकांकी :

एकांकी नाट्य साहित्य की एक स्वतंत्र और सशक्त विधा है, जो नाटक एक ही अंक में समाप्त होता है, उसे एकांकी कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे One-Act Play कहा जाता है। एकांकी नाटक की संक्षिप्त एवं प्रभावशाली विधा है, जिसका प्रधान उद्देश्य किसी एक घटना, प्रसंग, समस्या अथवा विचार को केंद्र में रखकर उसका सशक्त

चित्रण करना है। इसमें कथावस्तु का विकास सीमित होते हुए भी अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से किया जाता है। एकांकी का एक निश्चित और सुविचारित उद्देश्य होता है। संघर्ष इसका प्राण तत्त्व होता है, जबकि क्रियाशीलता और गतिशीलता इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। एकांकी में सामान्यतः समय, स्थान और कार्य की एकता अर्थात् संकलनत्रय का पालन किया जाता है। इसकी संरचना ऐसी होती है कि अंत में किसी रहस्य, समस्या अथवा भाव का प्रभावशाली उद्घाटन हो सके। कथानक, पात्र एवं चरित्र-चित्रण, संवाद योजना, देशकाल एवं वातावरण, भाषा-शैली तथा उद्देश्य एकांकी के प्रमुख तत्त्व माने जाते हैं। इसके अतिरिक्त अभिनेयता भी एक महत्वपूर्ण तत्त्व है, क्योंकि एकांकी का मूल स्वरूप मंचीय प्रस्तुति से जुड़ा होता है। संक्षिप्तता इसकी प्रमुख विशेषता है, इसलिए इसमें अनावश्यक प्रसंगों और विवरणों को स्थान नहीं दिया जाता है।

3. गीतिनाट्य :

जब किसी नाट्यकथा को मुख्यतः गीतों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है, तब उसे गीतिनाट्य कहा जाता है। अंग्रेज़ी में इसे 'Poetic Drama' कहा जाता है। अंग्रेज़ी साहित्य में गीतिनाट्य का विशेष महत्त्व है। इसका विकास गीत, संगीत और नृत्य के समन्वय से हुआ है। गीतिनाट्य की भाषा प्रायः पद्यात्मक होती है, इसलिए इसके संवाद काव्यात्मक शैली में प्रस्तुत किए जाते हैं। इसमें भावनाओं की अभिव्यक्ति को विशेष स्थान दिया है। गीतिनाट्य में भावना के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं कि गीतिनाट्य का प्राणतत्त्व भावना अथवा मन का संघर्ष है और उसका माध्यम कविता है। गेयता और नाटकीयता के समन्वय के कारण गीतिनाट्य अत्यंत प्रभावशाली बनता है। इसमें तुकांत, अतुकांत तथा मुक्त छंदों का प्रयोग किया जाता है। हिंदी साहित्य में गीतप्रधान नाटकों की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। काव्यात्मकता के साथ-साथ वैयक्तिकता, भावातिरेक, चित्रात्मकता, नाटकीयता तथा अभिनेयता जैसी विशेषताएँ गीतिनाट्य को एक विशिष्ट और प्रभावपूर्ण नाट्य-विधा बनाती हैं।

ब) श्रव्य साहित्य :

जिस काव्य का रसास्वादन सुनकर अथवा पढ़कर किया जाता है, उसे श्रव्य काव्य कहा जाता है। यह साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। शैली के आधार पर श्रव्य काव्य के तीन प्रमुख भेद माने गए हैं- गद्य, पद्य तथा चंपू। इन तीनों रूपों में भावों और विचारों की कलात्मक अभिव्यक्ति की जाती है। जिसका विस्तृत विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है-

i) गद्य साहित्य :

गद्य साहित्य का समुचित विकास आधुनिक काल में हुआ है। इसलिए आधुनिक युग को 'गद्यकाल' भी कहा जाता है। गद्य की प्रमुख विधाओं में उपन्यास, कहानी, निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज, यात्रावृत्तांत तथा साक्षात्कार आदि शामिल हैं। इन विधाओं के माध्यम से जीवन और समाज का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया जाता है।

१. उपन्यास :

उपन्यास मानव जीवन का व्यापक, यथार्थ और वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करने वाली साहित्यिक विधा है। यह केवल काल्पनिक कथा नहीं, बल्कि जीवन की वास्तविकताओं पर आधारित रचना होती है। गद्य की सभी विधाओं में उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय, आकर्षक और सजीव माना जाता है। उपन्यास की महत्ता को प्रतिपादित

करते हुए मुंशी प्रेमचंद लिखते हैं मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को उद्घाटित करना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है। उपन्यास में कथावस्तु का विशेष महत्त्व होता है। उपन्यासकार पात्रों के माध्यम से विषय-वस्तु का विकास करता है। संक्षिप्त और प्रभावपूर्ण संवाद कथा को रोचक बनाते हैं। घटनाओं की सजीवता और प्रभावोत्पादकता के लिए वातावरण का भी महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। उपन्यास की भाषा-शैली पात्रों तथा परिस्थितियों के अनुकूल होती है। वर्तमान समय में लघु उपन्यासों का प्रचलन बढ़ा है, क्योंकि वे कम समय में पाठकों को पर्याप्त मनोरंजन और जीवनानुभूति प्रदान करते हैं।

2. कहानी :

आधुनिक युग में कहानी साहित्य का अत्यधिक विकास हुआ है। इसका उद्भव मानव भाषा और अभिव्यक्ति के विकास के साथ माना जाता है। एक समय कहानी का केंद्र विशिष्ट और लोकप्रिय व्यक्तित्व हुआ करता था, किंतु आज इसका नायक सामान्य एवं उपेक्षित जन भी है। कहानी के स्वरूप और विषय-वस्तु में जितनी विविधता दिखाई देती है, उतनी अन्य साहित्यिक विधाओं में दुर्लभ है। कहानी अपनी रोचकता और प्रभावशीलता के कारण आज भी पाठकों को आकर्षित करती है। कहानी को आख्यायिका, गल्प तथा कथा आदि नामों से भी जाना जाता है। कहानी में कल्पनाशीलता, नाटकीयता, सरलता, स्वाभाविकता, मनोवैज्ञानिकता, स्पष्टता तथा प्रभावोत्पादकता जैसे महत्त्वपूर्ण गुण विद्यमान रहते हैं, जो इसे एक लोकप्रिय और सशक्त साहित्यिक विधा बनाते हैं।

3. निबंध :

निबंध गद्य साहित्य की सर्वश्रेष्ठ और परिपक्व विधाओं में से एक है। 'निबंध' का शाब्दिक अर्थ है- बाँधना। यहाँ बाँधने का आशय विचारों और भावों को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने से है। निबंध का वर्तमान स्वरूप काफी हद तक पाश्चात्य साहित्य से प्रभावित है। अंग्रेजी में निबंध के लिए 'Essay' शब्द का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक निबंध का जन्मदाता फ्रांसीसी साहित्यकार मोंतेय को माना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल निबंध की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं यदि गद्य कवियों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है। वर्ण्यविषय, लेखक का व्यक्तित्व, भाषा-शैली तथा उद्देश्य निबंध के प्रमुख तत्त्व हैं। निबंध के लिए विषयों की कोई निश्चित सीमा नहीं होती है। जीवन और समाज से संबंधित कोई भी पक्ष इसका विषय बन सकता है।

4. रेखाचित्र :

रेखाचित्र आधुनिक युग की एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विधा है। साहित्य में प्रयुक्त 'रेखाचित्र' शब्द अंग्रेजी के 'Sketch' का पर्याय माना जाता है। इसे 'शब्दचित्र' भी कहा जाता है। कला के क्षेत्र में चित्रकला और चित्रकार का जो स्थान है, वही स्थान साहित्य में रेखाचित्र और रेखाचित्रकार का है। चित्रकला में रेखा, रूप और रंग का महत्त्व होता है, जबकि रेखाचित्र में रंगों का प्रयोग नहीं किया जाता। इसमें शब्दों की रेखाओं के माध्यम से किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना अथवा भाव का सजीव चित्र प्रस्तुत किया जाता है। रेखाचित्र का प्रधान उद्देश्य मानव-जीवन और समाज के प्रति प्रेम, संवेदना तथा सहानुभूति को जागृत करना है। यथार्थ की विश्वसनीयता और अनुभूति की प्रामाणिकता इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। हिंदी साहित्य में महादेवी वर्मा को रेखाचित्र-विधा में विशेष सफलता प्राप्त हुई है। उन्होंने अपने रेखाचित्रों में रूप-वर्णन और चरित्र-चित्रण दोनों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।

5. संस्मरण :

संस्मरण आधुनिक हिंदी गद्य की नूतन और आकर्षक विधा है। इसका संबंध स्मृति पर आधारित उन अनुभवों और घटनाओं से है, जो लेखक के जीवन में विशेष प्रभाव छोड़ते हैं। अंग्रेजी में संस्मरण के लिए 'चशोळी' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसे जीवनी साहित्य का ललित एवं लघु रूप भी माना जाता है। संस्मरण का मूल आधार स्मृति है, इसलिए इसमें वर्णित घटनाओं का विशिष्ट और प्रभावशाली होना आवश्यक है। डॉ. गोविंद त्रिगुणायत संस्मरण के स्वरूप को उद्धाटित करते हुए लिखते हैं जब कोई भावुक कलाकार अतीत की स्मृतियों में से कुछ रमणीय अनुभूतियों को अपनी कल्पना और संवेदना के माध्यम से रोचक एवं यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करता है, तब वह संस्मरण कहलाता है। हिंदी साहित्य में संस्मरण-विधा का विकास पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से हुआ है। संस्मरणकार सामान्यतः आत्मनिष्ठ होता है और जिन व्यक्तियों, घटनाओं तथा दृश्यों से वह प्रभावित होता है, उन्हें ही अपने संस्मरण का विषय बनाता है।

6. जीवनी :

किसी विशिष्ट व्यक्ति के क्रमबद्ध जीवन-वृत्तांत के वर्णन को जीवनी कहा जाता है। साहित्यिक विधाओं में जीवनी का अपना विशिष्ट स्थान है। यद्यपि जीवनी-लेखन की परंपरा अत्यंत प्राचीन है, हिंदी साहित्य में इसका व्यवस्थित विकास अपेक्षाकृत बाद में हुआ है। 'जीवनी', 'जीवन-चरित्र' तथा 'जीवन-चरित' ये तीनों शब्द प्रायः समान अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जीवनीकार अपनी रुचि, प्रेरणा और दृष्टिकोण के अनुसार किसी विशिष्ट व्यक्ति का चयन करता है तथा उसके जीवन का तथ्यपरक और क्रमबद्ध चित्रण प्रस्तुत करता है। जीवनी में कल्पना और अतिरंजना के लिए कोई स्थान नहीं है। चरित्र-नायक के व्यक्तित्व का चित्रण करते समय जीवनीकार उसके बाह्य तथा आंतरिक दोनों पक्षों का सूक्ष्म और वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करता है।

7. आत्मकथा :

आत्मकथा का शाब्दिक अर्थ है- 'अपने जीवन की कथा।' इसमें 'स्व' या आत्म-अनुभूति की प्रधानता होती है। आत्मकथा में लेखक अपने जीवन के अनुभवों, संघर्षों, सफलताओं और असफलताओं का यथार्थ एवं तथ्यपरक वर्णन प्रस्तुत करता है। इसमें कल्पना की अपेक्षा सत्य और वास्तविकता को अधिक महत्त्व दिया जाता है। आत्मकथाकार को अपने प्रत्यक्ष जीवन का चित्रण करने का अवसर मिलता है। आत्मकथा का मूल उद्देश्य आत्मपरीक्षण, आत्मविश्लेषण और आत्माभिव्यक्ति है। इसके माध्यम से लेखक अपने जीवन की घटनाओं का पुनरावलोकन करता है तथा पाठकों के मन में विश्वास और आस्था उत्पन्न करता है। तटस्थता, कलात्मकता, आत्मतत्त्व और आत्मपरीक्षण आत्मकथा के प्रमुख तत्त्व हैं। एक सच्चा आत्मकथाकार अपने जीवन के अच्छे और बुरे दोनों पक्षों का निष्पक्ष तथा ईमानदारी से चित्रण करता है।

8. रिपोर्टाज :

रिपोर्टाज हिंदी गद्य की एक महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा है, जिसका पत्रकारिता और साहित्य दोनों से घनिष्ठ संबंध है। 'रिपोर्टाज' शब्द मूलतः फ्रांसीसी भाषा से आया हुआ शब्द है। इसका संबंध अंग्रेजी के 'Report' शब्द से माना जाता है। हिंदी में इसे 'वृत्त-निर्देश' या 'सूचनिका' भी कहा जाता है। इसका विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान युद्ध-संबंधी घटनाओं के वर्णन से हुआ है। रिपोर्टाज में किसी घटना, परिस्थिति या दृश्य का यथार्थ, सजीव और प्रभावपूर्ण चित्रण किया जाता है। इसमें सत्य और तथ्य की प्रधानता होती है, किंतु साहित्यिक अभिव्यक्ति

के कारण इसमें भावात्मकता और कलात्मकता का भी समावेश रहता है। गद्यात्मक शैली के साथ-साथ कहीं-कहीं काव्यात्मकता की झलक भी दिखाई देती है। रिपोर्ताज का लेखक एक ही समय में पत्रकार और साहित्यकार दोनों की भूमिका निभाता है।

9. यात्रा-साहित्य :

यात्रा साहित्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। इसके स्वरूप की झलक अनेक प्राचीन ग्रंथों में भी दिखाई देती है। मानव सभ्यता के विकास में यात्राओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्राचीन काल से ही मनुष्य विभिन्न उद्देश्यों से यात्रा करता आया है, जिसके परिणामस्वरूप उसके ज्ञान, अनुभव और बौद्धिक विकास में निरंतर वृद्धि हुई है। यात्राएँ मनुष्य के जीवन को व्यापक दृष्टि प्रदान करती हैं तथा उसके आनंद और उत्साह की भावना को भी समृद्ध करती हैं। यात्रा-साहित्य में वास्तविकता और विश्वसनीयता का विशेष महत्व होता है। यात्रावृत्तांत लिखते समय लेखक को स्थान, संस्कृति, समाज तथा इतिहास का सम्यक् ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। इस विधा के माध्यम से पाठकों को विभिन्न क्षेत्रों, जनजीवन और सांस्कृतिक विविधताओं का परिचय प्राप्त होता है। हिंदी साहित्य में यात्रा-साहित्य का विकास हुआ है, यद्यपि अन्य गद्य-विधाओं की अपेक्षा इसका सृजन अपेक्षाकृत कम हुआ है।

10. साक्षात्कार :

साक्षात्कार आधुनिक हिंदी गद्य की एक नवविकसित, स्वतंत्र तथा महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा है। अंग्रेजी साहित्य में इसका पर्याप्त विकास हुआ है। अंग्रेजी में साक्षात्कार के लिए 'Interview' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जबकि हिंदी में इसके लिए 'भेंटवार्ता', 'वार्तालाप' और 'बातचीत' जैसे शब्द भी प्रचलित हैं। हिंदी साहित्य में साक्षात्कार विधा का विकास अपेक्षाकृत कम हुआ है, फिर भी इसका साहित्यिक महत्व निरंतर बढ़ रहा है। साक्षात्कार के माध्यम से किसी विशिष्ट व्यक्ति के विचारों, अनुभवों और व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त होता है। इस विधा में प्रश्नोत्तर के माध्यम से व्यक्तित्व और कृतित्व के विविध पक्षों का उद्घाटन किया जाता है। डॉ. गोविंद त्रिगुणायत के अनुसार, इंटरव्यू उस रचना को कहते हैं, जिसमें लेखक किसी व्यक्ति-विशेष से भेंट के दौरान प्राप्त अनुभवों, प्रतिक्रियाओं तथा अपने पूर्व संस्कारों, रुचियों और आस्थाओं को सरस, भावपूर्ण तथा व्यंजनाप्रधान शैली में अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार साक्षात्कार साहित्य और पत्रकारिता के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य करता है।

ii) पद्य साहित्य :

साहित्य और संस्कृति के विकास में पद्य का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जो साहित्यिक रचना छंदों के नियमों के अनुसार रची जाती है, उसे पद्य कहा जाता है। पद्य साहित्य अपनी लयात्मकता, सौंदर्य और भावाभिव्यक्ति के कारण विशेष महत्व रखता है। परंपरागत रूप से काव्य के दो प्रमुख भेद माने गए हैं- प्रबंध और मुक्तक। प्रबंध काव्य के अंतर्गत महाकाव्य, खंडकाव्य तथा एकार्थकाव्य का समावेश होता है, जबकि मुक्तक काव्य के अंतर्गत दो भेद हैं- पाठ्यमुक्तक और गेयमुक्तक। जिसका विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है-

अ) प्रबंध काव्य :

प्रबंध काव्य को मुक्तक काव्य की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इसमें जीवन के व्यापक और समग्र चित्रण पर विशेष बल दिया जाता है। प्रबंध काव्य का उद्देश्य किसी कथा, घटना या चरित्र को क्रमबद्ध और कलात्मक रूप में प्रस्तुत करना होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल प्रबंध काव्य की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं प्रबंध काव्य में मानव जीवन का एक पूर्ण दृश्य उपस्थित होता है। उसमें घटनाओं की संबद्ध श्रृंखला, स्वाभाविक क्रम तथा हृदय को स्पर्श करने वाले और विविध भावों का रसात्मक अनुभव कराने वाले प्रसंगों का समावेश होना चाहिए। प्रबंध काव्य में सामूहिक प्रभाव की सृष्टि पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसके प्रमुख तीन भेद हैं- महाकाव्य, खंडकाव्य और एकार्थकाव्य। इन सभी रूपों में कथा, चरित्र और भावों का सुव्यवस्थित तथा प्रभावपूर्ण चित्रण किया जाता है।

1. महाकाव्य :

महाकाव्य प्रबंध काव्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उत्कृष्ट रूप माना जाता है। यह साहित्य की श्रेष्ठ विधाओं में से एक है, जिसमें मानव जीवन के विविध पक्षों का व्यापक और कलात्मक चित्रण किया जाता है। 'महाकाव्य' शब्द संस्कृत के 'महत्' और 'काव्य' शब्दों के योग से बना है, जिसका अर्थ है- 'महान काव्य'। महाकाव्य प्रायः सर्गबद्ध रचना होती है तथा यह किसी महान चरित्र, ऐतिहासिक घटना या लोकमंगलकारी उद्देश्य को आधार बनाकर लिखी जाती है। भामह, दंडी, रुद्रट, हेमचंद्र, विश्वनाथ, आचार्य रामचंद्र शुक्ल तथा डॉ. नगेन्द्र आदि विद्वानों ने महाकाव्य के स्वरूप और तत्त्वों पर पर्याप्त मात्रा में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। पाश्चात्य साहित्य में अरस्तू, एबरक्रॉम्बी, डेबनोट, लुकान टेसो, वाल्टेयर आदि पाश्चात्य विद्वानों ने भी महाकाव्य की विशेषताओं का विवेचन प्रस्तुत किया है। महान कथानक, उदात्त चरित्र, उच्च आदर्श, व्यापक जीवन-दृष्टि तथा गरिमामयी शैली महाकाव्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं। हिंदी साहित्य में पृथ्वीराज रासो, पद्मावत, रामचरित मानस, आल्हाखंड, कामायनी, साकेत, प्रिय प्रवास, कुरुक्षेत्र तथा जयभारत आदि जैसे प्रसिद्ध महाकाव्य हैं।

2. खंडकाव्य :

खंडकाव्य में जीवन के किसी एक महत्त्वपूर्ण पक्ष, घटना अथवा प्रसंग का कलात्मक एवं प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। इसका आकार महाकाव्य की अपेक्षा लघु होता है, किंतु यह अपनी संरचना में पूर्ण एवं स्वतंत्र काव्य रचना मानी जाती है। खंडकाव्य का उद्देश्य भी महाकाव्य के समान धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरुषार्थों की प्राप्ति तथा जीवन-मूल्यों की प्रतिष्ठा करना होता है। जिस प्रकार उपन्यास और कहानी तथा नाटक और एकांकी के बीच आकार और विस्तार का अंतर होता है, ठीक उसी प्रकार महाकाव्य और खंडकाव्य में भी अंतर पाया जाता है। खंडकाव्य में कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल एवं वातावरण, रस, भाषा-शैली तथा उद्देश्य जैसे सभी आवश्यक काव्य-तत्त्व विद्यमान रहते हैं। हिंदी साहित्य में अनेक उत्कृष्ट खंडकाव्यों की रचना हुई है। जयद्रथ वध, सैरन्ध्री, पंचवटी, भोजराज, द्रौपदी, संशय की एक रात, आँसू तथा पथिक आदि जैसे हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण खंडकाव्य माने जाते हैं।

3. एकार्थकाव्य :

प्राचीन आचार्यों ने प्रबंधकाव्य के दो प्रमुख भेद- महाकाव्य और खंडकाव्य स्वीकार किए हैं, किंतु आचार्य विश्वनाथ मिश्र ने एकार्थकाव्य को भी प्रबंधकाव्य का एक स्वतंत्र भेद माना है। एकार्थकाव्य में किसी एक भाव, घटना, विचार अथवा उद्देश्य को केंद्र में रखकर काव्य की रचना की जाती है। सीमित कथानक के आधार पर रचित अपेक्षाकृत विस्तृत कविता को एकार्थकाव्य कहा जा सकता है। संक्षिप्त कथावस्तु, सीमित पात्र, सीमित संवाद, रस-भाव, भाषा-शैली तथा स्पष्ट उद्देश्य इसके प्रमुख तत्त्व हैं। एकार्थकाव्य में कवि का ध्यान किसी एक केंद्रीय भाव या प्रसंग की प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति पर केंद्रित रहता है। संक्षेप में एकार्थकाव्य सीमित साधनों के माध्यम से गहन भावानुभूति और कलात्मक प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम होता है। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कविता 'राम की शक्तिपूजा' एकार्थकाव्य के कोटि में आती है।

ब) मुक्तक काव्य :

मुक्तक काव्य का अर्थ है स्वतंत्र एवं स्वायत्त काव्य-रचना। यह भावप्रधान काव्य की श्रेणी में आता है, जिसमें प्रत्येक रचना अपने आप में पूर्ण और निरपेक्ष होती है। सरस एवं संवेदनशील कवियों के मुक्तक प्रायः अत्यंत लोकप्रिय होते हैं। अग्निपुराण में मुक्तक काव्य का उल्लेख प्राप्त होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, यदि प्रबंध-काव्य एक विस्तृत वनस्थली है, तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है। भामह, वामन तथा राजशेखर ने भी मुक्तक काव्य पर पर्याप्त मात्रा में विचार-विमर्श किया है। मुक्तक काव्य के दो प्रमुख भेद माने जाते हैं- पाठ्य मुक्तक और गेय मुक्तक। जिसका विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है-

1. पाठ्य मुक्तक :

पाठ्य मुक्तक वह काव्य है, जिसकी रचना ऐसे छंदों में की जाती है जिन्हें सामान्यतः लय, ताल और संगीत के साथ गाया नहीं जा सकता, बल्कि जिनका मुख्य उद्देश्य पठन और भावों की अभिव्यक्ति होता है। यह स्वतंत्र एवं पूर्ण काव्य-रचना होती है। पाठ्य मुक्तक की रचना प्रायः दोहा, चौपाई, बरवै आदि लघु छंदों में की जाती है। इसमें कवि अपने विचारों, भावों और अनुभूतियों को संक्षिप्त तथा प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है।

2. गेय मुक्तक (गीतिकाव्य) :

गेय पदों की रचना को गीतिकाव्य कहा जाता है। इसे प्रगीत-काव्य तथा गेय मुक्तक के नाम से भी जाना जाता है। भारत में गीतों की परंपरा अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रही है। गीत की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए महादेवी वर्मा लिखती हैं गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुःखात्मक अनुभूति का वह शब्दरूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मकता के कारण गेय बन सके। हिंदी गीतिकाव्य पर संस्कृत साहित्य का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। गीतों का परिष्कृत स्वरूप जयदेव की रचनाओं में मिलता है। हिंदी में साहित्यिक गीतों के सृजन का श्रेय विद्यापति को दिया जाता है। कबीरदास के गीत जनसामान्य में अत्यंत लोकप्रिय हैं, जबकि सूरदास के पद स्वभावतः गेय हैं। तुलसीदास ने भी भक्ति-भावना से ओतप्रोत अनेक गीतों की रचना की है।

रीतिकाल में यद्यपि शब्द-चमत्कार की प्रधानता रही, फिर भी गीति-परंपरा का प्रवाह बना रहा है। आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने इस परंपरा को नई दिशा प्रदान की। मैथिलीशरण गुप्त, मुकुटधर पांडेय, बद्रीनाथ भट्ट तथा माधव शुक्ल ने अभिनव शैली में गीतों की रचना की है। इस परम्परा को आगे चलकर समृद्ध

करने का कार्य जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' तथा शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि ने किया है। इस प्रकार गीति-काव्य परंपरा अपने प्रारंभिक स्वरूप से निरंतर विकसित होती हुई आज भी हिंदी साहित्य की एक सशक्त एवं लोकप्रिय विधा बन चुकी है।

iii) चंपू काव्य :

गद्य और पद्य के समन्वित रूप को चंपू काव्य अथवा मिश्र काव्य कहा जाता है। इसमें कथा-वर्णन के लिए गद्य तथा भावाभिव्यक्ति के लिए पद्य का प्रयोग किया जाता है। हिंदी में मैथिलीशरण गुप्त की 'यशोधरा' इसका उदाहरण है। संस्कृत साहित्य में नल चंपू तथा रामायण चंपू प्रसिद्ध चंपू काव्य हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि साहित्य की विविध विधाएँ अत्यंत प्राचीन एवं समृद्ध परंपरा की परिचायक हैं। साहित्य मानव-मन पर गहरा प्रभाव डालने में सक्षम होता है। इसमें शब्द और अर्थ का रमणीय तथा कलात्मक समन्वय देखने को मिलता है। समय और परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ साहित्य के विषय, स्वरूप और अभिव्यक्ति में भी परिवर्तन आता रहा है। संस्कार, शिक्षा, ज्ञान तथा मानवीय मूल्यों के संवर्धन में साहित्य का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साहित्यकार अपनी अंतरात्मा की अनुभूतियों को भावपूर्ण शब्दों में व्यक्त करता है। कोमल भावनाओं, शब्द-सौंदर्य और लयात्मकता के माध्यम से साहित्य भावात्मक विचारों की प्रभावशाली अभिव्यक्ति करता है।

1.2 सिनेमा : स्वरूप विवेचन

सिनेमा अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त एवं प्रभावशाली माध्यम है। सिनेमा शब्द का सामान्य अर्थ- 'चलती हुई चित्रों के माध्यम से कथा, भाव, विचार या घटनाओं को प्रस्तुत करने की कला है।' अर्थात् सिनेमा चलती हुई तस्वीरों के माध्यम से कहानियों, भावनाओं और विचारों को अभिव्यक्त करनेवाली एक दृश्य-श्रव्य कला विधा है। जिसमें अभिनय, संगीत, संवाद, प्रकाश, कैमरा, संपादन आदि के द्वारा किसी कहानी या विषय को प्रभावपूर्ण ढंग से दर्शकों तक पहुंचाया जाता है। सिनेमा को 'सातवीं कला' भी कहा जाता है। हिंदी सिनेमा का अर्थ केवल 'चलचित्र' या 'मनोरंजन' तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके गहरे सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक मायने हैं। सिनेमा का वास्तविक अर्थ समाज के उन पहलुओं को उजागर करना है, जो अक्सर अनदेखा रह जाते हैं। सिनेमा समाज के मूल्यों और विसंगतियों को उजागर करने वाली एक कलात्मक विधा है। मनोरंजन सिनेमा का पहला सत्य हो सकता है, लेकिन इसकी असल सार्थकता समाज को सही दिशा देने में निहित है। सिनेमा हाशिए के समाज की पीड़ा और संघर्ष को सच्चाई के साथ पर्दे पर प्रस्तुत करता है। आधुनिक दौर में सिनेमा का अर्थ 'लोकतांत्रिकरण' से जुड़ा हुआ है।

साहित्य के समान सिनेमा भी समाज का दर्पण है। सिनेमा वर्तमान युग में इंसान को प्रभावित करनेवाला सहज और सरल साधन है। सिनेमा, फिल्म अथवा चलचित्र में एक के बाद एक कई चित्र इस तरह दर्शाए जाते हैं कि निर्जीव भी सजीव के जैसे लगता है। सिनेमा का निर्माण वीडियो केमरे से होता है परंतु उसके साथ जुड़कर ऐसे कई आयाम और विशेष प्रभावकारी तकनीकों की वजह से उसे और अधिक मनोरंजक बनाया जाता है। परदे पर चलनेवाली तस्वीरें किसी-न-किसी कहानी को प्रकट करती हैं।

बीसवीं शताब्दी की लोकप्रिय कला सिनेमा है। यह एक ऐसी कला है जिसमें बाकी की सारी कलाओं को समेटा जा सकता है। अपने आपको सबके सामने प्रस्तुत करना है तो सिनेमा एक सर्वसम्मत साधन है। सिनेमा में प्रकाश विज्ञान, रसायन विज्ञान, विद्युत विज्ञान, केमरा तकनीक, फोटोग्राफी तथा दृष्टि विज्ञान के भीतर हुई नई खोजों के चलते अद्भुत परिवर्तन आ चुके हैं। जिलेटिन फिल्मों का प्रयोग, प्रोजेक्टर, लेंस ऑप्टिक्स तथा कंप्यूटर के नए परिवर्तन और प्रोग्रामों के चलते सिनेमा के दर्शकों पर पड़नेवाला प्रभाव लोकप्रिय कला बनाने में सक्षम बन पाया है। सिनेमा आसानी से नई तकनीक आत्मसात करता है। इसने अपने कलात्मक क्षेत्र का विस्तार मूक सिनेमा से लेकर सवाक् सिनेमा, रंगीन सिनेमा, ३ डी सिनेमा, स्टीरियो साउंड, वाइड स्क्रीन और आई मेक्स तक किया है। फिल्म के निर्माण में निर्माता, निर्देशक, अभिनेता जितना महत्वपूर्ण होता है उतना ही महत्वपूर्ण फिल्म का लेख पक्ष होता है। कथा, पटकथा तथा संवाद को फिल्म का अभिन्न अंग मानते हैं। दृश्य-श्राव्य माध्यम के लिए लिखी गई कहानी का स्वरूप साहित्यिक कहानी से अलग होता है। फिल्म बनाने के लिए किसी अच्छी कथा की आवश्यकता होती है। कहानी से ही फिल्म की शुरुआत होती है। फिल्मकार अपनी फिल्म में कहानी का मात्र फिल्मांकन ही नहीं करता तो उसका पुनर्सृजन करके एक स्वतंत्र कलाकृति की रचना करता है। फिल्म की कहानी में शुरुआत, मध्य अर्थात् टकराव तथा अंत होना ज़रूरी है। साथ ही साथ मनोरंजन को भी उसमें डालना आवश्यक है। पटकथा लेखन फिल्म का मूल आधार कहा जा सकता है। कथा को पटकथा में रूपांतरित किये बिना उसका फिल्मांकन असंभव है। यानि पटकथा, कथा का दृश्य-रूपांतरण होती है। पटकथा में संवाद प्रधानता तथा दृश्य प्रधानता होती है। संक्षेप में सिनेमा आज मनुष्यों के सपनों को सजा रहा है और उसे अपने काल्पनिक दुनिया के सहारे यथार्थ को परिचित करवा रहा है। सिनेमा मनुष्य विकास में योगदान दे रहा है और उसको अपनी वास्तविकताओं से परिचित करवाते हुए आनंद भी प्रदान कर रहा है।

1.2.1 सिनेमा की परिभाषा :

सिनेमा आधुनिक युग की ऐसी समन्वित कला है जिसमें साहित्य, नाटक, नृत्य, अभिनय, संगीत, चित्रकला तथा तकनीकी माध्यमों का समावेश होता है। विभिन्न विद्वानों एवं फिल्म चिंतकों ने सिनेमा की प्रकृति और स्वरूप को अपने-अपने दृष्टिकोणों से परिभाषित करने का सफलतापूर्वक प्रयास किया है, जो निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है-

1) फिल्मकार कमलस्वरूप :

फिल्मकार कमल स्वरूप सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- सिनेमा अनुभूति और संवेदना, व्यष्टि और समष्टि के सम्बन्ध का विज्ञान है। विभिन्न नाट्य एवं ललित कलाओं का सम्मिश्रण है। किसी घटना के काल और दिक् के आयामों का रूपांकन है। प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट है कि सिनेमा को केवल कला न मानकर अनुभव, संवेदना तथा सामाजिक संबंधों की अभिव्यक्ति के रूप में देखना चाहिए। संक्षेप में सिनेमा विभिन्न कलाओं का समन्वित रूप है।

2) विजय शर्मा :

विजय शर्मा सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- फिल्म साहित्य से अलग एक भिन्न विधा है। यहां कथानक होता है मगर वही सबकुछ नहीं होता है। फिल्म भिन्न मुहावरों में बात करती है। प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट है कि सिनेमा साहित्य पर आधारित होने के बावजूद उससे भिन्न स्वतंत्र कला विधा है। इसमें विशिष्ट भाषा, शिल्प,

दृश्य संरचना एवं अभिव्यक्ति के अलग-अलग तरीके होते हैं। सिनेमा में कथानक के साथ-साथ दृश्य, संगीत, प्रकाश, ध्वनि, कैमरा तथा संपादन आदि की अहम् भूमिका होती है।

3) आलोक पांडेय :

आलोक पांडेय सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- दरअसल सिनेमा सिर्फ अभिव्यक्ति नहीं है, वह एक अन्वेषणकारी माध्यम भी है। वह बहुत कुछ ऐसा भी कहता और करता है, जिसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता। प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट है कि सिनेमा की विशिष्ट अभिव्यक्ति क्षमता और उसकी अनुसंधानपरक प्रकृति को रेखांकित किया है। सिनेमा केवल विचारों, भावनाओं तथा अनुभवों को अभिव्यक्त करने का माध्यम मात्र नहीं है, बल्कि वह जीवन, समाज और मानवीय चेतना के विभिन्न पक्षों का अन्वेषण भी करता है।

4) डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव :

डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव के शब्दों में सिनेमा अभिव्यक्ति का सर्वाधिक प्रभावशाली एवं सशक्त माध्यम है, जो किसी घटना एवं विचार को मनोरम ढंग से प्रस्तुत करता है। व्यक्ति के अंतःकरण को संस्पर्शित कर उसे सकारात्मक दिशा की ओर अग्रसर करता है। सिनेमा मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है अपितु वह अतीत का अभिलेख है, वर्तमान का चितेरा और भविष्य की कल्पना है। सामाजिक परिवर्तन, लोक जागरण तथा बौद्धिक क्रांति की दिशा में भारतीय सिनेमा अविस्मरणीय है। यह ऐसा प्रभावकारी माध्यम है जिसने सभी उम्र के लोगों के मानस को झंकृत कर दिया है। स्पष्ट है कि सिनेमा व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक महत्ता को स्पष्ट करता है। डॉ. वीरेंद्र ने सिनेमा को केवल मनोरंजन का माध्यम न मानकर उसे एक सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार सिनेमा मानव के अंतर्मन को स्पर्श करता है।

5) सत्यजित राय :

सत्यजित राय सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- सिनेमा साधन है चरित्र या स्थिति के विकास की सच्ची अभिव्यक्ति का। छायांकन की बारिकियों और गहराईयों में, भावना की प्रखरता में, साधनों के सीधे-सादे, सही और सशक्त उपयोग में, चलचित्र की समानता कोई कला नहीं कर सकती। स्पष्ट है कि सिनेमा किसी चरित्र, घटना या परिस्थिति के विकास को अत्यंत प्रभावशाली और यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने का सशक्त माध्यम है।

6) डॉ. गजेन्द्रप्रताप सिंह :

डॉ. गजेन्द्रप्रताप सिंह सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- फिल्म मनोरंजन के साथ-साथ हमारे देश की संस्कृति, सभ्यता और नए युग को प्रदर्शित करती है। फिल्म ही एक ऐसा माध्यम है, जिसके जरिए लोग हर चीज से प्रभावित होते हैं। प्रस्तुत परिभाषा के माध्यम से सिनेमा के सांस्कृतिक, सामाजिक और शैक्षणिक महत्ता को उद्घाटित किया है। सिनेमा केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि वह किसी देश की संस्कृति, सभ्यता, परम्परा, जीवन-मूल्यों तथा सामाजिक परिवर्तन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है।

7) विनोद दास :

विनोद दास सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- सिनेमा एक कला है और अन्य कलाओं की तरह यह भी हमारे समय और समाज की बुनियादी तथा तत्कालिक चिंताओं-जिज्ञासाओं को अपनी सृजनशीलता का एक अनिवार्य अंश बनाता रहा है। प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट है कि सिनेमा एक सशक्त कलात्मक माध्यम है, जो

कला और समाज के बीच एक सेतु का कार्य करता है। जिस प्रकार साहित्य, चित्रकला, संगीत और नाटक अपने समय के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों को व्यक्त करते हैं, ठीक उसी प्रकार सिनेमा भी समाज की वास्तविकता और मानवीय संवेदनाओं को अपने कथ्य का आधार बनाता है।

8) चेतन आनंद :

चेतन आनंद सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- सिनेमा कहानी पेश करने का जरिया है, इसलिए फिल्म एक जवान है, भाषा है। कहानी कई जरिये से पेश की जा सकती है। बोले हुए शब्दों में, लिखे हुए शब्दों में, नृत्य में, कविता में, गीत में, हाव-भाव में, तस्वीरों में। फिल्म में ये सब समा जाते हैं। फिल्म सब जरियों का समूह है। इसलिए किसी जवान या भाषा से ऊंची है। फिल्म सिर्फ कला नहीं, कलाओं में महान कला है। इस परिभाषा से सिनेमा की व्यापकता, बहुआयामिता और समन्वयकारी प्रकृति को स्पष्ट किया जाता है। सिनेमा एक समग्र कला है, जो विभिन्न कलात्मक तत्वों को एकीकृत करके नई सृजनात्मक अभिव्यक्ति प्रस्तुत करती है।

निष्कर्ष: सिनेमा से संबंधित उपर्युक्त सभी परिभाषाओं का अध्ययन करने के उपरान्त यह स्पष्ट होता है कि सिनेमा मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि वह मानवीय जीवन के आंतरिक यथार्थ के साथ-साथ उसके बाहरी और स्वप्निल संसार को भी अभिव्यक्ति प्रदान करता है। सिनेमा के माध्यम से ही मानव के प्रेम, करुणा, क्रोध, भय, आशा, निराशा और उत्साह जैसे विभिन्न मानवीय संवेगों को उजागर किया जाता है। सिनेमा दर्शकों के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ता है और उन्हें भावनात्मक रूप से प्रभावित करता है।

1.2.2 सिनेमा के तत्त्व :

सिनेमा हमारी संस्कृति का अहम् हिस्सा है। सिनेमा ने हमेशा से ही सामाजिक परिवर्तन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वर्तमान समय में सिनेमा केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि जन शिक्षा का बड़ा ही प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हुआ है। सिनेमा ने भावना और कल्पना के सम्मिश्रण से अपना एक खास श्रोता वर्ग स्थापित किया है। तथ्यों का विश्लेषण, भावों का उद्रेक, तर्कसंगतता तथा सहजता आदि का दायित्वपूर्ण निर्वाह करने वाले फीचर फिल्म निर्देशक को इसके तत्वों पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है। सिनेमा में अंतर्निहित दो महत्वपूर्ण तत्व हैं पहला तकनीकी पक्ष और दूसरा कला पक्ष। निम्नलिखित रूप में सिनेमा के तकनीकी और कला पक्ष के तत्वों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है-

अ) सिनेमा का तकनीकी पक्ष :

सिनेमा की सफलता काफी हद तक तकनीकी पक्ष पर निर्भर होती है। इसलिए सिनेमा के तकनीकी पक्ष को समझना हमारे लिए अत्यंत आवश्यक है। सिनेमा के तकनीकी पक्ष के विभिन्न पहलुओं को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है-

1. फिल्म निर्माता (फिल्म प्रोड्यूसर) :

फिल्म निर्माण में निर्माता की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। कहानी के चयन से लेकर फिल्म के प्रदर्शन तक की संपूर्ण जिम्मेदारी निर्माता की होती है। फिल्म के निर्माण से होने वाले लाभ तथा हानि की संपूर्ण जिम्मेदारी निर्माता की ही होती है। फिल्म यह निर्देशक का माध्यम है इसमें कोई दो राय नहीं है। इसलिए फिल्म निर्देशक के संदर्भ में कहा जाता है कि 'डायरेक्टर इज द कॅप्टन ऑफ द शिप' अर्थात् निर्देशक जहाज़ का कप्तान होता है।

यदि फिल्म की लागत और आर्थिक पक्ष को ध्यान में रखकर फिल्म निर्माता के बारे में कहा जाए, तो यह कहना अधिक उचित होगा कि 'प्रोड्यूसर इज द ओनर ऑफ द शिप' अर्थात् निर्माता उस जहाज का स्वामी होता है। यदि कोई फिल्म किसी कारणवश असफल हो जाती है तो स्पॉट बॉय से लेकर निर्देशक तक किसी का कोई आर्थिक नुकसान नहीं होता है, लेकिन फिल्म निर्माता को इसका भारी नुकसान उठाना पड़ता है। यदि निर्माता आर्थिक दृष्टिकोण से सक्षम है तो वह इस नुकसान को सहन कर सकता है, किंतु यदि उसकी आर्थिक स्थिति मजबूत नहीं है तो वह कर्ज की दलदल में फँस जाता है और आगे चलकर उसे गंभीर वित्तीय संकट का सामना करना पड़ सकता है।

2. फिल्म निर्देशक (फिल्म डायरेक्टर) :

फिल्म निःसंदेह निर्देशक का माध्यम है। निर्देशक के बिना फिल्म की कल्पना भी नहीं की जा सकती। निर्देशक फिल्म का सर्वेसर्वा होता है। फिल्म के लिए उपयुक्त कहानी का चयन करना तथा उसे पर्दे पर प्रस्तुत करने का दायित्व निर्देशक का होता है। यद्यपि किसी कहानी पर फिल्म बनाने से पूर्व निर्माता के अनुमोदन की आवश्यकता होती है, क्योंकि निर्देशक का प्रधान उत्तरदायित्व निर्माता के प्रति भी होता है। कहानी के चयन से लेकर फिल्म प्रदर्शन तक निर्देशक की भूमिका अहम् होती है। एक सफल निर्देशक के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वह फिल्म निर्माण से संबंधित सभी विधाओं और विभागों का पर्याप्त ज्ञान रखे, ताकि आवश्यकता पड़ने पर वह अपने सहयोगियों का उचित मार्गदर्शन कर सकें। हालाँकि यह जरूरी नहीं है कि वह सिनेमा के सभी विभागों में निपुण हो। यह इसलिए आवश्यक है कि निर्देशक को आरंभ से अंत तक फिल्म के प्रत्येक कार्य का समन्वय एवं संचालन करना होता है। निर्देशक की सहायता के लिए एक प्रधान सहयोगी निर्देशक होता है। प्रधान सहयोगी निर्देशक को भी फिल्म समाप्त होने तक निर्देशक के साथ भाग-दौड़ करनी पड़ती है। अतः निर्माता के बाद निर्देशक ही सबसे महत्वपूर्ण होता है। निर्देशक कलाकार, तकनीकी दल तथा निर्माता के बीच एक सशक्त कड़ी का कार्य करता है।

3. कला निर्देशक (आर्ट डायरेक्टर) :

फिल्म की शूटिंग चाहे इनडोर हो या आउटडोर, बंगले में हो या फिर स्टूडियो में, सेट का निर्माण और उसका कलात्मक स्वरूप निर्धारित करना कला निर्देशक का महत्वपूर्ण कार्य होता है। वह फिल्म के कथानक, वातावरण और समय-काल के अनुरूप सेट की रूपरेखा तैयार करता है तथा उपयुक्त शूटिंग स्थलों के चयन में भी सहयोग देता है। कलाकारों की वेशभूषा और सेट के रंगों में सामंजस्य स्थापित करना भी कला निर्देशक की ही जिम्मेदारी होती है। किसी दृश्य में यदि पत्थर फेंकने का प्रसंग हो, तो कलाकार की सुरक्षा के लिए कला निर्देशक पल्प या अन्य हल्की सामग्री से पत्थरों जैसी कृत्रिम वस्तुएँ तैयार करवाता है, जिससे दृश्य सजीव एवं यथार्थ प्रतीत होता है।

4. संगीत निर्देशक (म्यूज़िक डायरेक्टर) :

फिल्म में गीत-संगीत का निर्माण निर्देशक तथा पटकथा की आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाता है। सिनेमा का इतिहास इस बात का साक्ष्य है कि अनेक फिल्में अपने उत्कृष्ट गीत-संगीत के कारण अत्यधिक लोकप्रिय और सफल हुई हैं। कहानी और परिस्थितियों के अनुसार गीतों का समावेश स्वाभाविक एवं प्रभावी होना चाहिए। निर्देशक, गीतकार और संगीतकार आपसी विचार-विमर्श से गीतों की रचना करते हैं। गीतकार द्वारा

लिखे गए शब्दों को संगीतकार अपनी लय, ताल और धुन के माध्यम से संवारता है। गीतों की रिकॉर्डिंग स्टूडियो में की जाती है। इस प्रकार फिल्म के भाव, वातावरण और प्रभाव को सशक्त बनाने में संगीत निर्देशक का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

5. नृत्य निर्देशक (कोरिओग्राफर) :

फिल्म में गीतों के फिल्मांकन की प्रमुख जिम्मेदारी नृत्य निर्देशक की होती है। यद्यपि संपूर्ण फिल्मांकन निर्देशक के नेतृत्व में संपन्न होता है, किंतु गीतों के दृश्यांकन का दायित्व नृत्य निर्देशक संभालता है। गीतों की शूटिंग यदि छोटे-छोटे और प्रभावशाली शॉट्स के माध्यम से की जाए, तो उसका आकर्षण और प्रभाव बढ़ता है। एक सफल नृत्य निर्देशक के लिए नृत्यकला, कैमरा तकनीक तथा कलाकारों को प्रशिक्षण देकर उनसे अपेक्षित प्रदर्शन करवाने की क्षमता आवश्यक होती है। वह गीत की भावनाओं और लय के अनुरूप नृत्य-चरणों की कल्पना करता है। हिंदी फिल्मों में गीतों पर अधिक व्यय होने के कारण नृत्य निर्देशक की जिम्मेदारी भी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है।

6. एक्शन डायरेक्टर :

फिल्मों में मारधाड़, साहस, पराक्रम और रोमांच से भरपूर दृश्य वास्तविक नहीं होते, फिर भी पर्दे पर वे पूरी तरह सच प्रतीत होते हैं। ऐसे दृश्यों की योजना और फिल्मांकन की जिम्मेदारी एक्शन निर्देशक पर होती है। वह कहानी की आवश्यकता के अनुसार लड़ाई, पीछा करने तथा जोखिमपूर्ण स्टंट दृश्यों का संयोजन करता है। फाइट मास्टर्स और स्टंट कलाकारों का चयन, उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना तथा अभिनेताओं से प्रभावशाली प्रदर्शन करवाना भी उसकी जिम्मेदारी होती है। कई बार अभिनेताओं के स्थान पर डमी या स्टंटमैन का उपयोग किया जाता है। सफल एक्शन निर्देशक के लिए स्टंट तकनीक और कैमरा संचालन का ज्ञान अत्यंत आवश्यक होता है।

7. कैमरामन (सिनेमेटोग्राफर) :

कैमरा और कैमरामैन के बिना फिल्म निर्माण की कल्पना नहीं की जा सकती। कैमरे की तकनीक से संबंधित सभी कार्य, जैसे फिल्म लोड करना, बैटरियों का प्रबंधन, कैमरा स्टैंड का उपयोग, फिल्म स्पीड, लेंस का चयन, फ्रेम कंपोजिशन तथा कैमरा कोणों का निर्धारण, कैमरामैन को भली-भाँति आना चाहिए। उत्कृष्ट फिल्मांकन के लिए कुशल और अनुभवी कैमरामैन की आवश्यकता होती है। उसे निर्देशक की कल्पना और अपेक्षाओं की भी स्पष्ट समझ होनी चाहिए, जो कैमरामैन निर्देशक की दृष्टि के साथ सामंजस्य स्थापित कर सके, वही उसकी कल्पना को प्रभावी ढंग से पर्दे पर प्रस्तुत कर सकता है। इस कार्य में सहयोगी कैमरामैन भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निर्देशक और पटकथा की आवश्यकतानुसार प्रकाश व्यवस्था करना भी कैमरामैन का प्रमुख दायित्व होता है।

8. प्रोडक्शन मैनेजर :

फिल्म निर्माण के विभिन्न विभागों को समय-समय पर आवश्यक सामग्री, उपकरण तथा अन्य संसाधन उपलब्ध कराना प्रोडक्शन मैनेजर का प्रमुख कार्य होता है। वह सामान की खरीद, किराये की व्यवस्था, शूटिंग लोकेशन की अनुमति प्राप्त करना तथा पूरी यूनिट की आवश्यकताओं का ध्यान रखता है। फिल्म निर्माण से संबंधित किसी भी सदस्य को आवश्यक वस्तु समय पर उपलब्ध कराना उसकी प्रमुख जिम्मेदारी होती है। इस कारण उसे शूटिंग यूनिट का 'रिंग मास्टर' भी कहा जाता है। उसकी सहायता के लिए असिस्टेंट प्रोडक्शन मैनेजर और स्पॉट बॉय कार्य करते हैं। शूटिंग चाहे इनडोर हो या आउटडोर, यात्रा, आवास, भोजन तथा अन्य

व्यवस्थाओं का समुचित प्रबंध वही करता है। साथ ही फिल्म रीलों को सुरक्षित रूप से प्रयोगशाला तक पहुँचाने और यूनिट की छोटी-बड़ी समस्याओं का समाधान करने की जिम्मेदारी भी उसी पर होती है। इसीलिए फिल्म निर्माण में प्रोडक्शन मैनेजर की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है।

9. फिल्म विषय पर शोध कार्य :

फिल्म निर्माण से पूर्व विषय से संबंधित गहन शोध करना अत्यंत आवश्यक होता है। विशेष रूप से किसी ऐतिहासिक घटना, कालखंड या व्यक्तित्व पर आधारित फिल्म के लिए उस समय की परिस्थितियों, सामाजिक जीवन तथा संबंधित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। उस युग की वेशभूषा, केशभूषा, भाषा, संस्कृति, रीति-रिवाज, कला तथा गीत-संगीत के बारे में प्रामाणिक एवं तथ्यात्मक जानकारी एकत्र करना आवश्यक होता है। इससे फिल्म अधिक यथार्थ और विश्वसनीय बनती है। उदाहरण के लिए, सत्यजित राय ने प्रेमचंद के द्वारा लिखित रचना 'शतरंज के खिलाड़ी' पर फिल्म के निर्माण हेतु उन्नीसवीं शताब्दी के लखनऊ के जीवन का व्यापक अध्ययन किया, जो उनके शोधपूर्ण दृष्टिकोण का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनके इस व्यापक शोध कार्य के लिए उन्हें ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने डी. लिट. की मानद उपाधि से सम्मानित किया है।

10. फिल्म कलाकारों का चयन :

फिल्म की सफलता में अभिनेता और अभिनेत्री की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान समय में दर्शकों का आकर्षण भी काफी हद तक कलाकारों पर निर्भर करता है। इसलिए निर्माता और निर्देशक कहानी, पात्रों तथा बजट को ध्यान में रखते हुए कलाकारों का चयन करते हैं। चयनित कलाकारों के साथ औपचारिक अनुबंध किया जाता है। कहानी के पात्रों की आवश्यकताओं के अनुसार उपयुक्त अभिनय क्षमता, व्यक्तित्व और चेहरे-मोहरे वाले कलाकार चुने जाते हैं। नए कलाकारों को अवसर देने के लिए उनका स्क्रीन टेस्ट लिया जाता है। भूमिका के अनुरूप सही कलाकारों का चयन फिल्म की सफलता के लिए अत्यंत आवश्यक है।

11. फिल्म शूटिंग :

फिल्म की शूटिंग मुख्यतः दो प्रकार की होती है- इनडोर और आउटडोर शूटिंग। इनडोर शूटिंग स्टूडियो में बनाए गए सेटों अथवा भवनों के भीतर की जाती है, जबकि आउटडोर शूटिंग प्राकृतिक स्थलों, बागों, पहाड़ों, समुद्र तटों या अन्य दर्शनीय स्थानों पर होती है। कहानी की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त स्थानों का चयन किया जाता है।

12. प्रकाश व्यवस्था :

प्रकाश व्यवस्था फिल्म के तकनीकी पक्ष का एक अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा है। दृश्यों को प्रभावशाली और आकर्षक ढंग से कैमरे में कैद करने के लिए उचित प्रकाश की आवश्यकता होती है। प्रत्येक दृश्य की प्रकृति के अनुसार प्रकाश व्यवस्था की जाती है। इनडोर शूटिंग में उच्च क्षमता वाले प्रकाश उपकरणों का उपयोग किया जाता है। प्राकृतिक प्रकाश अपर्याप्त होने पर कृत्रिम प्रकाश तथा रिफ्लेक्टरों की सहायता ली जाती है। शूटिंग के दौरान लाइटमैन के निर्देशन में लाइट बॉय प्रकाश व्यवस्था का संचालन करते हैं।

13. सेट डिजाइनिंग :

कहानी की आवश्यकता तथा पटकथा के निर्देशों के आधार पर कृत्रिम लोकेशन तैयार किए जाते हैं, जिन्हें सिनेमा का सेट कहा जाता है। कला निर्देशक इन सेटों को यथासंभव वास्तविक और स्वाभाविक रूप देने का प्रयास करता है। आवश्यकता अनुसार वह गाँव, बस्तियाँ, राजमहल, झोपड़पट्टियाँ, मंदिर, जेल आदि का निर्माण करता है। वर्षा, बिजली चमकने जैसे प्राकृतिक दृश्यों का भी कृत्रिम सृजन किया जाता है। कुशलतापूर्वक निर्मित सेट दर्शकों को वास्तविक एवं सजीव प्रतीत होते हैं और फिल्म की विश्वसनीयता बढ़ाते हैं।

14. मेकअप मैन :

शूटिंग के दौरान अभिनेता-अभिनेत्रियों तथा अन्य कलाकारों का मेकअप पटकथा और पात्र की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। मेकअप कलाकार शूटिंग से पहले पात्र के अनुरूप उनका रूप-सज्जा तैयार करता है। ऐतिहासिक फिल्मों में पात्रों को उस काल के अनुरूप तथा आधुनिक फिल्मों में समकालीन शैली के अनुसार सजाया जाता है। मेकअप मुख्यतः दो प्रकार का होता है- साधारण मेकअप और चरित्र मेकअप। मेकअप का उद्देश्य केवल साज-श्रृंगार नहीं, बल्कि चरित्र को प्रभावशाली और विश्वसनीय बनाना होता है। मेकअप जितना स्वाभाविक हो, उतना अधिक प्रभावी माना जाता है। मेकअप मैन को विशेष प्रभावों जैसे घाव, जलन, चेचक के निशान, दुर्घटना अथवा रोग संबंधी रूपांकन भी तैयार करने पड़ते हैं। वह निर्देशक के मार्गदर्शन में अपना कार्य संपन्न करता है।

15. वेशभूषा (कॉस्ट्यूम) :

किसी भी पात्र की वेशभूषा का निर्धारण मुख्यतः निर्देशक द्वारा किया जाता है। उसके निर्देशों के अनुसार वेशभूषाकार या ड्रेसमैन आवश्यक पोशाक तथा सहायक सामग्री तैयार करता है। कलाकारों को पात्रानुकूल वेशभूषा में प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी भी उसी की होती है। फिल्म के कथानक, परिवेश और पात्रों की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार वस्त्रों का चयन किया जाता है। इसके लिए ड्रेसमैन फिल्म से संबंधित शोध सामग्री का भी सहारा लेता है। यदि कहानी समुद्रतटीय क्षेत्र की हो तो उसी अनुरूप वस्त्र तैयार किए जाते हैं, जबकि शहरी परिवेश के लिए आधुनिक परिधानों का चयन किया जाता है। राजा, पुजारी, भिखारी अथवा अन्य पात्रों की पोशाक, आभूषण और आवश्यक वस्तुओं का यथार्थ चयन कर उन्हें प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने की प्रमुख जिम्मेदारी वेशभूषाकार की होती है।

16. केश-विन्यास :

केश-विन्यास का कार्य हेयर ड्रेसर के द्वारा किया जाता है। पात्र की आयु, सामाजिक स्थिति, व्यक्तित्व तथा दृश्य की आवश्यकता के अनुसार उसके बालों की शैली निर्धारित की जाती है। ग्रामीण, शहरी, धनी या साधारण पात्रों के केश-विन्यास में स्वाभाविक रूप से भिन्नता होती है। इसलिए केश-सज्जा पात्र के चरित्र और परिवेश के अनुरूप होनी चाहिए। उम्र अधिक दिखाने के लिए केवल बालों में सफेदी लगाने के बजाय स्ट्रीप विग जैसी तकनीकों का उपयोग अधिक यथार्थ और प्रभावी माना जाता है।

17. स्टिल फोटोग्राफी :

शूटिंग के दौरान प्रत्येक दृश्य के कुछ स्थिर चित्र (स्टिल फोटोग्राफ) लिए जाते हैं। इनका उपयोग दृश्य-क्रम, वेशभूषा और सेट की निरंतरता बनाए रखने तथा फिल्म के प्रचार-प्रसार में किया जाता है। यह कार्य विशेष कौशल की मांग करता है। अनेक स्टिल फोटोग्राफर आगे चलकर सफल छायाकार भी बनते हैं।

18. ध्वनिमुद्रण (साउंड रेकॉर्डिंग) -

शूटिंग के दौरान कलाकारों के संवाद तथा विभिन्न ध्वनियों का रिकॉर्डिंग किया जाता है। प्रारंभ में संवादों को गाइड ट्रैक के रूप में ध्वनिमुद्रित किया जाता है। इसके बाद रिकॉर्डिंग स्टूडियो में संबंधित कलाकारों द्वारा होंठों की गति के अनुरूप उनकी डबिंग की जाती है। डबिंग के पश्चात तैयार साउंड ट्रैक को अंतिम प्रिंट में शामिल किया जाता है। इसलिए शूटिंग के समय ध्वनिमुद्रण अत्यंत आवश्यक माना जाता है।

19. डबिंग :

संपादन की अंतिम रूपरेखा के अनुसार साउंड रिकॉर्डिंग स्टूडियो में कलाकारों से उनके संवाद पुनः रिकॉर्ड कराए जाते हैं। इस प्रक्रिया को 'डबिंग' कहा जाता है। शूटिंग के दौरान रिकॉर्ड किए गए संवाद केवल गाइड ट्रैक के रूप में उपयोग किए जाते हैं। जबकि बाद में प्रत्येक दृश्य को स्क्रीन पर प्रदर्शित कर कलाकार अपने पात्र के होंठों की गति के अनुरूप संवाद बोलते हैं। इस कार्य में वे गाइड ट्रैक की सहायता लेते हैं। यदि शूटिंग के समय उच्चारण, भावाभिव्यक्ति या संवाद प्रस्तुति में कोई कमी रह गई हो, तो उसे डबिंग के दौरान सुधारा जा सकता है। डबिंग में केवल संवादों का ही ध्वनिमुद्रण किया जाता है।

20. साउंड इफेक्ट :

डबिंग के बाद फिल्म निर्माण में साउंड इफेक्ट का कार्य किया जाता है। संवादों के अतिरिक्त फिल्मों में अनेक प्रकार की ध्वनियों की आवश्यकता होती है, जैसे जूतों की आहट, वर्षा की आवाज, काँच के बर्तनों की खनक, दरवाजे के खुलने-बंद होने की ध्वनि, वाहन के स्टार्ट होने की आवाज, हॉर्न, सायरन तथा पशु-पक्षियों की विभिन्न ध्वनियाँ आदि। इन सभी को विशेष ध्वनि प्रभाव (साउंड इफेक्ट) कहा जाता है। निर्देशक की आवश्यकताओं के अनुसार सहायक निर्देशक यह निर्धारित करता है कि कौन-सी ध्वनि किस दृश्य में प्रयुक्त होगी। इसके बाद ध्वनि अभियंता (साउंड इंजीनियर) विभिन्न ध्वनियों को अलग-अलग चैनलों पर रिकॉर्ड करता है। साथ ही पृष्ठभूमि संगीत भी जोड़ा जाता है। संवाद, संगीत और ध्वनि प्रभावों के संतुलित संयोजन से दृश्य अधिक प्रभावशाली, यथार्थपूर्ण और भावपूर्ण बनते हैं।

21. फिल्म संपादन (फिल्म एडिटिंग) :

फिल्म का संपादन फिल्म निर्माण की अंतिम और अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। जिस प्रकार एक कुशल दर्जी कपड़े के विभिन्न टुकड़ों को जोड़कर सुंदर परिधान तैयार करता है, ठीक उसी प्रकार संपादक विभिन्न दृश्यों को व्यवस्थित कर एक प्रभावशाली फिल्म का निर्माण करता है। शूटिंग पूर्ण होने के बाद निगेटिव फिल्म से पॉजिटिव प्रिंट तैयार किया जाता है, जिसे 'फर्स्ट प्रिंट' कहा जाता है। इसके तैयार होते ही संपादन कार्य आरंभ हो जाता है। निर्देशक और संपादक सबसे पहले फर्स्ट प्रिंट का अवलोकन करते हैं। इसके बाद शूटिंग के दौरान तैयार की गई डोप शीट के आधार पर अनुपयुक्त या त्रुटिपूर्ण दृश्यों को अलग किया जाता है। फिर कहानी और पटकथा के

अनुसार उपयुक्त दृश्यों को क्रमबद्ध रूप से जोड़ा जाता है। फिल्म को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए क्लोज-अप, रिएक्शन शॉट तथा अन्य आवश्यक दृश्यों का समुचित संयोजन किया जाता है। फिल्म की गति, प्रभाव और सौंदर्य काफी हद तक संपादन पर निर्भर करते हैं। अंतिम रूप से तैयार फिल्म प्रदर्शन हेतु वितरकों को सौंप दी जाती है।

22. फिल्म वितरण (फिल्म डिस्ट्रीब्यूशन) :

फिल्म वितरण फिल्म निर्माण प्रक्रिया का अंतिम चरण होता है। इसमें निर्माता विभिन्न वितरकों को फिल्म के प्रदर्शन और प्रसारण संबंधी अधिकार प्रदान करता है। इनमें सैटेलाइट अधिकार, देश-विदेश में प्रदर्शन के अधिकार, संगीत अधिकार तथा अन्य व्यावसायिक अधिकार शामिल होते हैं। इन अधिकारों के लिए निर्माता और वितरक कंपनियों के बीच औपचारिक अनुबंध किया जाता है। अधिकार हस्तांतरण के पश्चात् फिल्म को रिलीज़ किया जाता है और दर्शकों के लिए उसका प्रदर्शन आरंभ होता है।

ब) सिनेमा का कला पक्ष :

सिनेमा की सफलता में कला पक्ष की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसलिए इसके विभिन्न कलात्मक आयामों को समझना आवश्यक है। सिनेमा के कला पक्ष के प्रमुख पहलुओं का परिचय निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया है-

1. कथा एवं पटकथा :

सिनेमा निर्माण के लिए एक सशक्त कहानी का होना अत्यंत आवश्यक है। कहानी का चयन ही फिल्म निर्माण की प्रथम और महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है। निर्माता सबसे पहले उपयुक्त कहानी का चयन करता है तथा उस पर निर्देशक के साथ विचार-विमर्श करता है। इसके पश्चात् कहानी की मूल रूपरेखा पटकथा और संवाद लेखकों को दी जाती है। कहानी के आधार पर ही पटकथा का निर्माण किया जाता है, जो फिल्म निर्माण की विस्तृत योजना प्रस्तुत करती है। पटकथा के अनुसार कलाकारों का चयन, शूटिंग स्थलों का निर्धारण, सेट डिज़ाइन, गीत-संगीत तथा अन्य तकनीकी व्यवस्थाएँ तय की जाती हैं। पटकथाकार को फिल्म की तकनीकी प्रक्रियाओं और दृश्यात्मक प्रस्तुति का पर्याप्त ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। वह प्रत्येक दृश्य, स्थान, पात्र, संवाद, ध्वनि तथा अन्य आवश्यक तत्वों का विस्तार से वर्णन करता है। इसलिए एक सफल पटकथाकार में साहित्यिक कथा को प्रभावशाली दृश्यात्मक रूप देकर उसे फिल्म की कहानी में परिवर्तित करने की क्षमता का होना जरूरी है।

2. संवाद :

सिनेमा के दृश्यों में कलाकारों द्वारा बोले जाने वाले वाक्यों को संवाद कहा जाता है। इन संवादों की रचना करने वाला व्यक्ति संवाद लेखक कहलाता है। संवाद लिखते समय उसे फिल्म की कथा, पात्रों के स्वभाव, परिवेश तथा परिस्थितियों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। संवादों की भाषा कहानी और पात्रों के अनुरूप होनी चाहिए, जिससे वे स्वाभाविक और प्रभावशाली प्रतीत हों। सामान्यतः पटकथा तैयार होने के बाद संवाद लेखन का कार्य किया जाता है। कई बार प्रभावशाली संवाद ही किसी फिल्म की लोकप्रियता और सफलता का प्रमुख कारण बनते हैं, जैसे- जंजीर, शोले, अमर प्रेम आदि। इसलिए संवाद फिल्म का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो पात्रों की भावनाओं और कथानक को प्रभावी ढंग से व्यक्त करता है।

3. स्क्रीनप्ले :

स्क्रीनप्ले फिल्म की वह दृश्यात्मक प्रस्तुति है, जिसके माध्यम से कहानी को प्रभावी ढंग से दर्शकों तक पहुँचाया जाता है। कई बार ऐसे दृश्य होते हैं, जहाँ बिना संवादों के भी कथा स्पष्ट रूप से व्यक्त हो जाती है। दृश्य, पात्रों की गतिविधियाँ, भाव-भंगिमाएँ तथा घटनाओं का क्रम स्वयं कहानी को आगे बढ़ाते हैं। ऐसे अवसरों पर शब्दों की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि दृश्य ही अपने आप में अर्थपूर्ण होकर कथा का संदेश दर्शकों तक पहुँचाते हैं।

4. गीत :

फिल्मी गीतों की रचना सामान्य कविता लेखन की अपेक्षा अधिक जटिल और चुनौतीपूर्ण होती है। कविता लिखते समय कवि अपनी कल्पना और भावनाओं को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करता है, जबकि फिल्मी गीतों का लेखन कथा, पात्रों, परिस्थितियों और प्रसंगों से बंधा होता है। एक सफल गीतकार में उत्कृष्ट काव्य-प्रतिभा, भावाभिव्यक्ति की क्षमता तथा भाषा पर सशक्त अधिकार होना आवश्यक है। फिल्मी गीत केवल मधुर शब्दों का संयोजन नहीं होते, बल्कि वे फिल्म की कहानी को आगे बढ़ाने और पात्रों की भावनाओं को व्यक्त करने का महत्वपूर्ण माध्यम भी होते हैं। गीत का विषय, पात्रों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश तथा फिल्म की पृष्ठभूमि के अनुरूप उसकी शब्दावली और शैली निर्धारित की जाती है। यदि संगीतकार पहले से धुन तैयार कर चुका हो, तो गीतकार को उसी धुन और लय के अनुरूप शब्दों की रचना करनी पड़ती है। इसलिए फिल्मी गीत लेखन में सृजनात्मकता के साथ-साथ तकनीकी समझ का होना भी अत्यंत आवश्यक है।

गीत एक प्रकार का नवसृजन है, जो शब्दों और संगीत के माध्यम से दर्शकों के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ता है। हिंदी सिनेमा के इतिहास में कई गीतों को अमरता प्राप्त हुई है और कई फिल्मों की सफलता में गीतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में भी फिल्मी गीतों का उल्लेखनीय योगदान रहा है। हिंदी सिनेमा में शैलेंद्र, हसरत जयपुरी, मजरूह सुल्तानपुरी, कैफ़ी आज़मी, साहिर लुधियानवी, जावेद अख्तर तथा गुलज़ार जैसे महान गीतकारों की समृद्ध परंपरा रही है, जिन्होंने हिंदी फिल्म संगीत को नई ऊँचाइयाँ प्रदान की हैं।

5. संगीत :

हिंदी फिल्मों में संगीत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। फिल्मी गीत और संगीत दर्शकों की भावनाओं को प्रभावित करने तथा उन्हें आनंदित करने का प्रभावशाली माध्यम हैं। संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि वह कथा, पात्रों की मनःस्थिति और दृश्यों के भावों को भी अत्यंत प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करता है। मधुर संगीत और सार्थक गीत किसी फिल्म को यादगार बना सकते हैं। कई गीत अपनी उत्कृष्ट धुनों के कारण वर्षों तक लोकप्रिय बने रहते हैं। हिंदी सिनेमा में संगीत एक सृजनात्मक कला है, जिसने उसकी विशिष्ट पहचान स्थापित की है। आज संगीत के बिना हिंदी फिल्मों की कल्पना करना असंभव है। गीत और संगीत न केवल फिल्मों की लोकप्रियता बढ़ाते हैं, बल्कि दर्शकों के साथ भावनात्मक जुड़ाव भी स्थापित करते हैं। इसलिए गीत-संगीत हिंदी फिल्म का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सृजनात्मक पक्ष माना जाता है।

6. अभिनय :

अभिनय वह कला है जिसके माध्यम से अभिनेता, अभिनेत्री तथा अन्य कलाकार किसी कथा, पात्र या भाव को दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। भारतीय नाट्य परंपरा में भरतमुनि के नाट्यशास्त्र को अभिनय का मूल ग्रंथ माना जाता है। अभिनय का उद्देश्य शब्दों, भावों और क्रियाओं के माध्यम से पात्र की अनुभूतियों को दर्शकों तक प्रभावी रूप से पहुँचाना है। सामान्यतः किसी व्यक्ति, चरित्र या स्थिति का कलात्मक अनुकरण ही अभिनय कहलाता है। भरतमुनि ने अभिनय के चार प्रकार बताए हैं— आंगिक, वाचिक, आहार्य तथा सात्विक आदि। फिल्मों में कलाकार अपनी-अपनी भूमिकाओं के अनुसार इन तत्त्वों का उपयोग करते हैं। प्रभावशाली अभिनय पात्रों को जीवंत बनाकर फिल्म को सफल बनाता है, जबकि कमजोर अभिनय उसके प्रभाव को कम कर सकता है। इसलिए फिल्म की सफलता में अभिनय की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अभिनय सदैव सहज, सरल, स्वाभाविक और विश्वसनीय होना चाहिए।

7. नृत्य :

नृत्य मानवीय भावनाओं, विचारों और अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। यह एक सार्वभौमिक कला है, जिसका भारतीय संस्कृति और परंपरा से गहरा संबंध रहा है। भारतीय नृत्यकला में विविधता और समृद्धि का अद्भुत संगम देखने को मिलता है। सामान्यतः भारतीय नृत्य को शास्त्रीय और लोकनृत्य दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है। शास्त्रीय नृत्यों में कथक, भरतनाट्यम, ओडिसी, कुचिपुड़ी, मणिपुरी और कथकली प्रमुख हैं, जबकि लोकनृत्यों में विभिन्न राज्यों की सांस्कृतिक परंपराएँ परिलक्षित होती हैं। जैसे— महाराष्ट्र में लावणी, पंजाब में भांगडा आदि। पश्चिमी नृत्य प्रकारों में प्रमुख हैं बैले नृत्य, जाज, हिप-हॉप, स्विंग, सालसा, बॉलरूम डान्स आदि। हिंदी फिल्मों में नृत्य का विशेष महत्त्व रहा है। वर्तमान समय में गीत, संगीत और नृत्य का समन्वय हिंदी सिनेमा की विशिष्ट पहचान बन चुकी है। समय के साथ फिल्मी नृत्य की शैली में भी परिवर्तन आया है। आज फिल्मों में भारतीय और पाश्चात्य नृत्य शैलियों का समन्वय देखने को मिलता है। इस प्रकार नृत्य न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि फिल्म की भावनात्मक और सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति का भी महत्वपूर्ण माध्यम है।

निष्कर्ष: कहा जा सकता है कि सिनेमा के कला एवं तकनीकी पक्ष से संबंधित सभी तत्त्व किसी भी फिल्म की सफलता के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं। इन तत्त्वों के समन्वित उपयोग से ही फिल्म की कथा अधिक प्रभावशाली, आकर्षक, विश्वसनीय तथा दर्शकों के लिए मनोरंजक बनती है।

सिनेमा के प्रकार :

सिनेमा के कई प्रकार होते हैं। सिनेमा एक माध्यम है। जिसका प्रत्येक फिल्मकार अपनी दृष्टि से उपयोग करता है। उद्देश्य, समयावधि, विषय, स्वरूप, प्रस्तुत शैली और तकनीक के आधार पर सिनेमा के कई प्रकार विकसित हुए हैं। अतः सिनेमा की विविधता उसकी समृद्धि और व्यापकता का परिचायक है। निम्नलिखित रूप में सिनेमा के प्रकारों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है—

1. फीचर फिल्म या कहानी चित्र :

अंग्रेजी 'फीचर' (Feature) शब्द का हिंदी अर्थ है 'कथाशैली'। फीचर फिल्म वह फिल्म होती है जिसका निर्माण मुख्यतः व्यावसायिक उद्देश्य और दर्शकों के मनोरंजन के लिए किया जाता है। इन फिल्मों की निर्माण-लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है तथा इनका कथानक प्रायः कल्पना, यथार्थ अथवा दोनों के समन्वय पर

आधारित होता है। हिंदी फीचर फिल्मों में कथा, गीत-संगीत, नृत्य, प्रेम, संघर्ष, करुणा और रोमांच जैसे तत्त्व प्रमुख रूप से उपस्थित रहते हैं। सामान्यतः इनकी अवधि ८० से १८० मिनट के बीच होती है, जिससे इन्हें लघु फिल्मों से अलग पहचाना जाता है। भारत की पहली फीचर फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र' थी, जिसका निर्माण दादासाहेब फाल्के ने १९१३ ई. में किया था। फीचर फिल्मों का प्रदर्शन मुख्यतः सिनेमाघरों में किया जाता है तथा उनका वितरण व्यावसायिक रूप से किया जाता है। भारतीय फीचर फिल्मों अपनी भावनात्मकता, संवेदनशीलता और मनोरंजनात्मकता के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। संक्षेप में फीचर फिल्म उस फिल्म को कहा जाता है, जिन्हें सिनेमाघरों में वितरित कर व्यापार करने के उद्देश्य से बनायी जाती हैं। फीचर फिल्मों को कई प्रकारों में वर्गीकृत किया है। जैसे- एक्शन, अपराध, रहस्य, प्रेम, पारिवारिक, हॉरर, म्यूजिकल, थ्रिलर, हास्य, साइंस फिक्शन, युद्ध फिल्मों आदि। हिंदी फीचर फिल्म के प्रचलित प्रकारों का विवेचन निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत है-

अ) प्रेमप्रधान फिल्में :

हिंदी सिनेमा में प्रेम सबसे लोकप्रिय और व्यापक विषयों में से एक रहा है। मुख्यधारा की अधिकांश फिल्मों में किसी न किसी रूप में प्रेम-कथा अवश्य दिखाई देती है। प्रेम, इश्क, मोहब्बत और आशिकी के विविध रूपों को फिल्मकारों ने अलग-अलग दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया है। कहीं प्रेम-त्रिकोण, कहीं विरह, तो कहीं मिलन और त्याग की भावनाएँ दर्शकों को आकर्षित करती हैं। इस विषय पर अब तक हजारों फिल्मों निर्मित हुई हैं और आज भी यह क्रम निरंतर जारी है। प्रेमप्रधान फिल्में दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करती हैं, इसलिए बॉलीवुड में इनकी संख्या सदैव अधिक रही है तथा ये व्यावसायिक दृष्टि से भी अत्यंत सफल मानी जाती हैं।

ब) हिंसाप्रधान फिल्में :

हिंदी सिनेमा में हिंसाप्रधान फिल्मों का प्रचलन निरंतर बढ़ रहा है। इन फिल्मों में हिंसा, संघर्ष और रक्तपात के दृश्यों के माध्यम से भय, रोमांच तथा तनाव का वातावरण निर्मित किया जाता है। ऐसी फिल्में दर्शकों को चौंकाने और आकर्षित करने का प्रयास करती हैं। कई बार इनमें हिंसा के साथ कामुक प्रसंगों का भी समावेश किया जाता है, जिससे कथानक अधिक प्रभावोत्पादक और उत्तेजक बन जाता है।

क) हास्यप्रधान फिल्में :

हिंदी सिनेमा में हास्यप्रधान अथवा कॉमेडी फिल्मों का विशेष स्थान रहा है। इनका प्रधान उद्देश्य दर्शकों का स्वस्थ मनोरंजन करना होता है। ऐसी फिल्मों में दैनिक जीवन की घटनाओं, परिस्थितियों और मानवीय व्यवहार पर व्यंग्य के माध्यम से हास्य उत्पन्न किया जाता है। इस प्रकार की फिल्में छोटे-छोटे प्रसंग तथा रोचक चरित्र हास्य-निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार की फिल्में दर्शकों को हँसी और मनोरंजन प्रदान कर जीवन की चिंताओं से कुछ समय के लिए राहत देती हैं।

ड) सामाजिक फिल्में :

समाज से संबंधित समस्याओं और विषयों पर आधारित फिल्मों को सामाजिक फिल्में कहा जाता है। इनमें आर्थिक शोषण, जातिगत भेदभाव, सामाजिक अन्याय, सांप्रदायिकता, प्रांतवाद, नक्सलवाद तथा आतंकवाद जैसी समस्याओं का चित्रण किया जाता है। ये फिल्में समाज की वास्तविकताओं को उजागर कर जनजागरण का कार्य करती हैं। हिंदी सिनेमा में प्रतिवर्ष इस विषय पर अनेक फिल्में निर्मित होती हैं।

इ) राजनीतिक फिल्में :

राजनीतिक विषयों पर आधारित फिल्मों का निर्माण हिंदी सिनेमा में अपेक्षाकृत कम होता है। जबकि भारतीय समाज और जनजीवन पर राजनीति का व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। इन फिल्मों में देश और राज्यों की राजनीति, राजनेताओं का व्यक्तित्व, सत्ता-संघर्ष, राजनीतिक रणनीतियाँ तथा लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं से जुड़े विभिन्न पक्षों का चित्रण किया जाता है। राजनीतिक फिल्में समाज और शासन व्यवस्था की वास्तविकताओं को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम बनती हैं।

ई) पारिवारिक फिल्में :

पारिवारिक फिल्मों में परिवार और उससे जुड़े संबंधों का चित्रण किया जाता है। इनमें प्रेम, विरह, मिलन, बिछुड़न, संघर्ष, टूटन तथा आपसी मतभेद जैसे विषय प्रमुख होते हैं। माता-पिता, पति-पत्नी, भाई-भाई तथा अन्य पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को इन फिल्मों में प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही इस प्रकार की फिल्मों के माध्यम से संस्कृति, परंपरा, नैतिक मूल्यों और पारिवारिक आदर्शों का संदेश भी दिया जाता है। इसके साथ ही यह फिल्में सामाजिक सद्भाव, पारिवारिक एकता और मानवीय मूल्यों को सुदृढ़ बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उ) बायोपिक फिल्में :

बायोपिक अथवा जीवनीपरक फिल्में किसी वास्तविक या ऐतिहासिक व्यक्ति के जीवन पर आधारित होती हैं। इनमें प्रायः प्रसिद्ध व्यक्तित्वों के जीवन-संघर्ष, उपलब्धियों, चुनौतियों तथा प्रेरणादायक प्रसंगों का चित्रण किया जाता है। ऐसी फिल्मों के माध्यम से दर्शकों को महान व्यक्तियों के जीवन, उनके विचारों और कार्यों को निकटता से समझने का अवसर प्राप्त होता है।

2. डॉक्यूमेंट्री फिल्म :

इसे वृत्तचित्र भी कहा जाता है। इन फिल्मों का उद्देश्य सूचना और शिक्षा देना है। इन फिल्मों में कल्पना के स्थान पर यथार्थ पर बल दिया जाता है। इन फिल्मों का बजट फीचर फिल्म की तुलना में कम होता है। इस प्रकार की फिल्मों का निर्माण सरकारी तथा गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा अनुदान देने से किया जाता है। इस प्रकार की फिल्मों का प्रदर्शन सिनेमाघरों में नहीं होता है। अधिकांश डॉक्यूमेंट्री फिल्में राष्ट्रीय चैनलों पर दिखाई जाती हैं। इन फिल्मों में 'विचार' तथा 'सूचना' तत्त्व केंद्रबिंदु होता है। सूचना एवं तकनीकी विकास की बदौलत आज अच्छे, यथार्थ, समस्यावाले वृत्तचित्र निर्माण हो रहे हैं। इस तरह की फिल्मों का एक समृद्ध इतिहास है और वे हमेशा से लोगों को शिक्षित तथा सूचित करते हुए उनके व्यापक जागरण का लक्ष्य पूरा करती रही हैं। छोटे परदे पर डॉक्यूमेंट्री फिल्में अधिक प्रभावी सिद्ध हो रही है। दूरदर्शन के माध्यम से ग्रामीण जनता इन फिल्मों को देखती हैं क्योंकि इन फिल्मों से उन्हें अच्छी जानकारीयाँ मिलती हैं। पर्यावरण तथा जन स्वास्थ्य के प्रति सजगता फैलाने में डॉक्यूमेंट्री फिल्मों का महत्वपूर्ण योगदान है। डॉक्यूमेंट्री फिल्म के भी कई प्रकार हैं। जैसे सूचनात्मक डॉक्यूमेंट्री, कहानी डॉक्यूमेंट्री, यात्रापरक डॉक्यूमेंट्री, सामाजिक डॉक्यूमेंट्री, शोधपरक डॉक्यूमेंट्री, ऐतिहासिक डॉक्यूमेंट्री आदि।

3. टेलीफिल्म :

टेलीफिल्म का निर्माण सिर्फ टेलिविजन के लिए किया जाता है। टेलीफिल्म तथा फीचर फिल्म में काफी मात्रा में समानता होती है। जैसे कथानक, पात्र, मारधाड़, संघर्ष, संगीत आदि। इन फिल्मों को बनाने के लिए फीचर फिल्म की तुलना में कम लागत आती है। टेलीफिल्मों की शुरुआत ही इस उद्देश्य से हुई है कि विकास संबंधी अभियानों को बढ़ावा मिलें। इस कारण अधिकतर टेलीफिल्म के विषय विकास संबंधी रहे हैं और उनमें भी ग्रामीण विकास संबंधी विषय बड़ी मात्रा में लिए जाते हैं, क्योंकि भारत की तकरीबन सत्तर प्रतिशत आबादी देहातों में रहती है। टेलीफिल्मों के माध्यम से जन स्वास्थ्य, जलसंरक्षण, पर्यावरण संरक्षण, बालविकास, आवास निर्माण, ग्रामोद्योग, सफाई आदि जैसे विषयों के माध्यम से ग्रामीण जनता को प्रेरित किया जाता है।

4. एनिमेशन (गतिकला) और कार्टून फिल्म :

एनिमेशन और कार्टून फिल्मों का निर्माण विशेष रूप से बच्चों को ध्यान में रखकर किया जाता है। इन फिल्मों को बनाने में आधुनिक तकनीक का प्रयोग किया जाता है। काल्पनिक कथाएँ, दंतकथाएँ, पुराण, प्राचीन घटनाएँ आदि का सहारा लेकर कार्टून फिल्में बनाई जाती हैं। इस प्रकार की फिल्में देखने में बच्चे-बूढ़े भी रुचि रखते हैं। इन फिल्मों का प्रदर्शन टेलिविजन तथा सिनेमाघरों में भी होता है। आजकल हिंदी में एनिमेशन और कार्टून फिल्मों ने धूम मचाई है। बच्चों पर इन फिल्मों का जबरदस्त प्रभाव आज देखा जा सकता है।

5. विज्ञापन फिल्म :

व्यावसायिक लाभ हेतु किसी दुकान, व्यापारी प्रतिष्ठान, कम्पनी द्वारा अपना उत्पाद तथा सेवा बेचने हेतु बनाई जानेवाली फिल्म 'विज्ञापन फिल्म' कहलाती है। ग्राहकों को अपने उत्पाद की जानकारी देने हेतु सुप्रसिद्ध फिल्म नायक नायिकाओं को लेकर इन फिल्मों को बनाया जाता है ताकि ग्राहक उनको देखकर उस वस्तु के प्रति आकर्षित हो सके। विज्ञापन फिल्मों का प्रदर्शन टी.वी. चैनलों तथा सिनेमाघरों में फीचर फिल्म के मध्यांतर में किया जाता है। विज्ञापन फिल्मों ने आज अपना अलग अस्तित्व स्थापित किया है। जिसके कारण ग्राहक तथा उत्पादक दोनों को फायदा होता है।

6. लघु फिल्म :

लघु फिल्म को अंग्रेजी में शॉर्ट फिल्म कहा जाता है। लघु फिल्म एक ऐसी छोटी फिल्म होती है जिसकी अवधि आमतौर पर चालीस मिनट या चालीस मिनट से कम होती है। यह दर्शकों को बांधने और एक विशिष्ट संदेश या भावना को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने का सशक्त माध्यम है। शॉर्ट फिल्म का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं बल्कि समाज को जागरूक करना, नई सोच को बढ़ावा देना तथा किसी विशेष विषय की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना है। इन फिल्मों में सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याएं, पारिवारिक संबंध, महिला सशक्तिकरण, अंधविश्वास, शिक्षा, पर्यावरण, बालश्रम, भ्रष्टाचार, मानसिक स्वास्थ्य आदि जैसे कई विषयों पर लघु फिल्में बनायी जाती हैं। संक्षेप में लघु फिल्म आधुनिक सिनेमा का एक प्रभावशाली और सशक्त प्रकार है।

7. समाचार चित्र :

प्रतिदिन की समस्या तथा असाधारण घटनाओं का वास्तविक चित्रांकन करके बनायी गई फिल्म समाचार चित्र कहलाती है। इसे अंग्रेजी में 'छशी ठशशश्र' या 'News Film' कहा जाता है। समाचार चित्रों के माध्यम से देश विदेश की महत्वपूर्ण घटनाओं, सामाजिक गतिविधियों, राजनीतिक कार्यक्रमों, खेल प्रतियोगिताओं तथा सांस्कृतिक आयोजनों की सटीक जानकारी दृश्य रूप में व्यक्त की जाती है। समाचार चित्र के माध्यम से लोग युद्ध, स्वतंत्रता आंदोलन, वैज्ञानिक उपलब्धि, राष्ट्रीय उत्सव तथा अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं को देख पाते हैं। इससे लोगों को ताजा खबरों की जानकारी प्राप्त होती है। समाचार चित्र को प्रारंभिक समय में सिनेमा घरों में मुख्य फिल्म के प्रदर्शन से पहले दिखाया जाता था। लेकिन वर्तमान युग में समाचार चैनल, डिजिटल मीडिया और सोशल मीडिया के कारण समाचार चित्रों का स्वरूप बदल गया है।

8. पपेट फिल्म :

कठपुतली विश्व के प्राचीनतम रंगमंच पर खेले जानेवाले मनोरंजक कार्यक्रमों में से एक हैं। 'पपेट' से तात्पर्य है- 'कठपुतली' अर्थात् कठपुतलियों अथवा गुड्डे-गुड्डियों को एनिमेशन द्वारा चलायमान बनाकर निर्मित चलचित्र पपेट फिल्म कहलाते हैं। पपेट फिल्म सिनेमा और नाट्यकला का एक रोचक एवं कलात्मक प्रकार है। इस प्रकार के फिल्म में कहानी को व्यक्त करने के लिए जीवित कलाकारों के स्थान पर कठपुतलियों का प्रयोग किया जाता है। कठपुतलियों को धागों, डंडों, हाथों तथा आधुनिक तकनीकों की मदद से संचालित किया जाता है। पपेट फिल्म में मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा, संस्कृति और सामाजिक संदेश को व्यक्त करनेवाला प्रभावशाली माध्यम है। आज के आधुनिक डिजिटल युग में कम्प्यूटर, ग्राफिक्स और एनिमेशन के विकास के बावजूद पपेट फिल्मों का महत्व कम नहीं हुआ है। यह फिल्में अपनी सजीवता, कल्पनाशीलता और संदेशात्मकता के कारण आज भी दर्शकों के बीच लोकप्रिय बनी हुई हैं।

9. प्रयोगवादी फिल्म :

जब कोई फिल्मकार अपनी अर्धसुप्त मानस की अभिलाषाओं, अनुभूतियों, स्वप्नों तथा कल्पनाओं आदि अदृश्य, प्रवृत्तियों को दृश्य रूप में चित्रित करने के लिए नित नए-नए आकार-प्रकारों, प्रतीकों तथा प्रारूपों का अविष्कार द्वारा चलचित्र की नई भाषा का निर्माण करनेवाला चलचित्र प्रयोगवादी चित्र है। इसे अंग्रेजी में एुशीळाशपीरश्र ऋछश्रा कहा जाता है। प्रयोगवादी सिनेमा में पारंपरिक फिल्म निर्माण की सीमाओं को तोड़कर नए विचारों, तकनीकों और अभिव्यक्ति शैलियों का प्रयोग किया जाता है। भारतीय प्रयोगवादी सिनेमा के विकास में सत्यजीत रे, वी. शांताराम, ऋत्विक् घटक, मणि कौल, कुमार शाहीनी, चंदूलाल शाह और श्याम बेनेगल जैसे फिल्मकारों का उल्लेखनीय योगदान रहा है। इन फिल्मकारों ने सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदनाओं और कलात्मक अभिव्यक्ति को अपनी फिल्मों का प्रमुख आधार बनाया है। इन्हीं के प्रयासों से भारतीय सिनेमा को वैश्विक स्तर पर नई पहचान प्राप्त हुई है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि फिल्में समाज और समय का जीवंत दस्तावेज होती हैं। फिल्मों की कहानियाँ अब केवल प्रेम कहानियों और नायकों के इर्द-गिर्द सीमित नहीं रही हैं। 'तारे ज़मीन पर' और 'पीपली लाइव' जैसी फिल्मों ने मानसिक स्वास्थ्य, शिक्षा और ग्रामीण भारत की समस्याओं पर विस्तृत चर्चा की है। इससे

8. भारत की पहली फीचर फिल्म कौनसी है?
अ) राजा हरिश्चंद्र
क) शोले
ब) आलम आरा
ड) जंजीर
9. भारत में पहली फीचर फिल्म किस ने बनाई थी?
अ) आर्देशिर ईरानी
क) गुलजार
ब) दादासाहेब फाल्के
ड) अमिताभ बच्चन
10. डॉक्यूमेंट्री फिल्म को क्या कहा जाता है?
अ) कठपुतली
क) कल्पना चित्र
ब) वृत्तचित्र
ड) गति चित्र

आ) निम्नलिखित वाक्यों के नीचे दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर वाक्य फिर से लिखिए।

1. साहित्य विशेषतः ----- के प्रति प्रतिबद्ध होता है।
अ) सत्य और यथाथ
क) सच और झूठ
ब) कल्पना और सौंदर्य
ड) अंधविश्वास एवं अज्ञानता
2. साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के ----- शब्द से हुई है।
अ) सहित
क) संस्कार
ब) समन्वय
ड) समभाव
3. संस्कृत में साहित्य के स्थान पर ----- शब्द का प्रयोग होता था।
अ) सहित
क) काव्य
ब) सहभाव
ड) अलंकार
4. भाव तत्त्व का संबंध सीधे ----- से है।
अ) जीवन
क) मानव
ब) हृदय
ड) कल्पना
5. ----- तत्त्व साहित्य को सुसंगत, तर्कपूर्ण और प्रभावशाली बनाता है।
अ) भाव
क) कल्पना
ब) बुद्धि
ड) शैली
6. शैली तत्त्व को ----- तत्त्व भी कहा जाता है।
अ) शब्द
क) बुद्धि
ब) भाव
ड) शैली

10. स्क्रीनप्ले : पटकथा
11. इनडोर शूटिंग : यदि शूटिंग कमरे के अंदर या छत के नीचे की जाती है तो उसे इनडोर शूटिंग कहा जाता है।
12. आउटडोर शूटिंग : यदि शूटिंग खुले में, किसी मैदान आदि में की जाती है तो उसे आउटडोर शूटिंग कहा जाता है।
13. लोकेशन : परिवेश स्थान
14. हॉरर फिल्म : दर्शकों को डराने, चौंकाने या अचंभित करनेवाली फिल्म
15. सिनेमैटोग्राफर : डायरेक्टर ऑफ फोटोग्राफी

1.6 स्वयं – अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

- | | | |
|----------------------|---------------------|----------------------------|
| अ) 1) Literature | 2) सुमित्रानंदन पंत | 3) उपर्युक्त सभी |
| 4) Essay | 5) चंपू | 6) एकांकी नाटक |
| 7) तीन | 8) राजा हरिश्चंद्र | 9) दादासाहेब फाल्के |
| 10) वृत्तचित्र | | |
| आ) 1) सत्य और यथार्थ | 2) सहित | 3) काव्य |
| 4) हृदय | 5) बुद्धि | 6) शब्द |
| 7) शब्द चित्र | 8) उपर्युक्त सभी | 9) जनसंचार |
| 10) सातवीं | 11) जीवनीपरक | 12) प्रेम-त्रिकोण और जुदाई |

1.7 सारांश :

साहित्य और सिनेमा मानव समाज के दो अत्यंत प्रभावशाली एवं सशक्त माध्यम हैं। साहित्य जहाँ विचारों, कल्पनाओं और संवेदनाओं को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, वहीं सिनेमा उन्हें दृश्य एवं श्रव्य रूप में सजीव बना देता है। दोनों समाज के यथार्थ को प्रतिबिंबित करते हैं तथा परस्पर एक-दूसरे के पूरक के रूप में कार्य करते हैं।

साहित्य और सिनेमा संवेदनशील अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम हैं। दोनों मानव-हृदय की भावनाओं को स्पर्श करते हुए उसकी संवेदनाओं को जागृत एवं परिष्कृत करने का कार्य करते हैं।

भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने साहित्य के तत्त्वों पर व्यापक एवं गहन विचार-विमर्श किया है। उन्होंने साहित्य के प्रमुख तत्त्वों-भाव तत्त्व, बुद्धि तत्त्व, कल्पना तत्त्व तथा शैली तत्त्व-का विस्तारपूर्वक विवेचन प्रस्तुत किया है।

साहित्य गद्य और पद्य के समन्वित स्वरूप में अभिव्यक्त होने वाली एक व्यापक कला है। इसके दो प्रमुख भेद- दृश्य साहित्य एवं श्रव्य साहित्य माने गए हैं। ये दोनों अभिव्यक्ति के भिन्न-भिन्न माध्यमों के रूप में साहित्यिक अनुभूतियों और विचारों को प्रस्तुत करते हैं।

सिनेमा सभी कलाओं का समन्वित एवं सशक्त माध्यम है, जिसमें साहित्य, संगीत, चित्रकला, नाटक तथा अभिनय का अद्भुत संगम देखने को मिलता है। इसके दो प्रमुख तत्त्व माने जाते हैं- तकनीकी पक्ष और कला पक्ष, जो इसकी प्रभावशीलता के आधार हैं।

सिनेमा के उद्देश्य, समयावधि, विषय-वस्तु, स्वरूप, प्रस्तुति-शैली तथा तकनीक के आधार पर इसके अनेक प्रकार माने जाते हैं। इनमें फीचर फिल्म, डॉक्यूमेंट्री फिल्म, टेलीफिल्म, एनिमेशन एवं कार्टून फिल्म, विज्ञापन फिल्म, लघु फिल्म, समाचार चित्र, पपेट फिल्म तथा प्रयोगवादी फिल्म आदि प्रमुख हैं।

1.8 स्वाध्याय :

अ) निम्नलिखित लघुत्तरी प्रश्नों के उत्तर 150 से 200 शब्दों में लिखिए।

1. साहित्य का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
2. साहित्य की परिभाषाओं का विवेचन कीजिए।
3. साहित्य के तत्त्वों का संक्षेप में विवेचन कीजिए।
4. दृश्य काव्य का परिचय दीजिए।
5. पद्य साहित्य का विवेचन कीजिए।
6. मुक्तक काव्य पर प्रकाश डालिए।
7. सिनेमा के स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
8. सिनेमा के तकनीकी पक्ष के तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।
9. सिनेमा के कला पक्ष के तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।

आ) निम्नलिखित दीर्घोत्तरी प्रश्नों के उत्तर 600 से 800 शब्दों में लिखिए।

1. साहित्य के तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।
2. साहित्य के भेदों पर प्रकाश डालिए।
3. सिनेमा के तत्त्वों का विवेचन कीजिए।
4. सिनेमा के प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।

1.9 क्षेत्रीय कार्य

1. ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हिंदी के लेखकों की सूची तैयार कीजिए।
2. ऑस्कर विजेता फिल्मों की सूची तैयार कीजिए।

1.10 अतिरिक्त अध्ययन हेतु संदर्भ।

1. सिनेमा और साहित्य : डॉ. भारती गोरे, नयी किताब प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. साहित्य, समाज और सिनेमा : संपा. हिमांशु, आनंद प्रकाशन, कोलकाता।
3. सिनेमा और फिल्मांतरित हिंदी साहित्य : डॉ. गोकुल क्षीरसागर, विकास प्रकाशन, कानपुर।
4. हिंदी साहित्य, सिनेमा, समाज तथा अन्य माध्यम : डॉ. नीता त्रिवेदी, हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली।
5. भारतीय हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा : डॉ. देवेंद्रनाथ सिंह, डॉ. वीरेंद्र सिंह यादव
6. साहित्य और समाज : संपा. प्रा. मुकेश कुमार कांजिमा
7. साहित्य और सिनेमा : संपा. डॉ. पुरुषोत्तम कुंदे

□□□

इकाई क्र. 2

साहित्य और सिनेमा का महत्व

- 2.1 उद्देश्य
- 2.2 प्रस्तावना
- 2.3 विषय विवेचन
 - 2.3.1 साहित्य का महत्व
 - 2.3.2 सिनेमा का महत्व
 - 2.3.3 हिंदी कथा साहित्य पर बनी फिल्मों का रसग्रहण
 - 2.3.3.1 तीसरी कसम (फणीश्वरनाथ रेणु)
 - 2.3.3.2 आँधी (कमलेश्वर)
 - 2.3.3.3 रजनीगंधा (मन्नू भंडारी)
- 2.4 स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न
- 2.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ
- 2.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर
- 2.7 सारांश
- 2.8 स्वाध्याय
- 2.9 क्षेत्रीय कार्य
- 2.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

2.1 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप: -

- ♦ साहित्य के महत्व से परिचित होंगे।
- ♦ सिनेमा के महत्व से परिचित होंगे।
- ♦ हिंदी कथा साहित्य पर बनी फिल्मों से परिचित होंगे।
- ♦ फणीश्वरनाथ रेणु के कहानी पर बनी 'तीसरी कसम' फिल्म के भाव और सौंदर्य को जानेंगे।
- ♦ कमलेश्वर के उपन्यास पर बनी 'आँधी' फिल्म के भाव और सौंदर्य को जानेंगे।
- ♦ मन्नू भंडारी की कहानी पर बनी 'रजनीगंधा' फिल्म के भाव और सौंदर्य को जानेंगे।

2.2 प्रस्तावना : -

मनुष्य की वैचारिक संवेदनशीलता और जीवन जगत को वह जिस रूप में देखना चाहता है उसकी कल्पना ने कला को जन्म दिया है। जिसकी अभिव्यक्ति साहित्य, स्थापत्य, चित्र, शिल्प आदि में हुई। आगे चलकर विज्ञान की विभिन्न तकनीकों ने सिनेमा, टेलीविजन आदि इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के कला रूप को जन्म दिया। साहित्य विश्व की प्राचीनतम कला है तो सिनेमा नवीनतम। मनुष्य की प्रवृत्तियों के उदात्तीकरण और संवेदनशीलता के विकास में साहित्य की जो भूमिका है वही नव प्रौद्योगिकी के युग में सिनेमा की भी रही है। यूँ कहें, तो आज यह अधिक प्रभावशाली कला रूप है। कला की दृष्टि से सिनेमा साहित्य से प्रभावित रहा है लेकिन फिर भी भारत में साहित्य और सिनेमा के बीच एक दूरी रही है। कुछ ही साहित्यिक कृतियों का फिल्मांकन हुआ है और सफल चित्रांकन की दृष्टि से गिनती की फिल्मों का ही नाम लिया जा सकता है। यद्यपि सिनेमा ने आधुनिक सामाजिक मूल्यों, आधुनिक वैचारिकी और कलावाद, सुरुचि के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

2.3 विषय विवेचन : -

साहित्य और सिनेमा का अटूट संबंध रहा है। साहित्य सिनेमा के सम्मुख सामने एक आदर्श प्रस्तुत करता है। साहित्य विधाओं पर आधारित सिनेमा बनाते समय उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध और कविता की कथावस्तु के साथ कला रूप भी जैसे भाषा, अलंकार, बिंब और प्रतीक आदि भी बड़े प्रभावशाली ढंग से किए जाते हैं। साहित्य सिनेमा को आधार प्रदान करता है तथा सिनेमा साहित्य को आम जनता तक पहुँचता है। साहित्य और सिनेमा ने आधुनिक सामाजिक मूल्यों, आधुनिक वैचारिकी और कलात्मक सुरुचि के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कहा जाता है कि जिस देश का जैसा साहित्य होगा वैसा वहाँ का समाज बनेगा। आज के परिदृश्य में कह सकते हैं कि जिस देश का सिनेमा जैसा होगा वैसा वहाँ का समाज बनेगा। जिस प्रकार साहित्य का समाज, संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, भाषा आदि से गहरा रिश्ता है ठीक उसी प्रकार सिनेमा का भी है। समाज और राष्ट्र निर्माण में साहित्य की तरह सिनेमा की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। साहित्य और सिनेमा हमारे जीवन की आवश्यकता है। साहित्य और सिनेमा के बिना हमारा जीवन नीरस हो जाएगा। साहित्य से हमें जीवन जीने की प्रेरणा और आनंद मिलता है। सिनेमा से हम मनोरंजन के साथ संदेश भी ग्रहण करते हैं। दोनों माध्यमों में समाज परिवर्तन की जबरदस्त ताकत है और समय-समय पर यह साबित भी हो चुका है कि साहित्य और सिनेमा ने किस कदर समाज को प्रभावित किया है। अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने के लिए प्रेरित भी किया है। इस प्रकार साहित्य और सिनेमा का मानव जीवन में अत्यधिक महत्त्व है।

2.3.1 साहित्य का महत्त्व -

जीवन और साहित्य का सम्बन्ध जितना सूक्ष्म है उतना ही व्यापक है। शहर के सीमेंट के पक्के घरों में रहकर भी जिस प्रकार हम निसर्ग के बिना निर्जीव से रहते हैं उसी प्रकार विज्ञान की उन्नत दशा में भी साहित्य के अभाव में हमारा जीवन वास्तविक जीवन नहीं। आज के उत्तर आधुनिक युग में यह प्रश्न हमारे सामने उपस्थित होता है कि साहित्य का जीवन से क्या सम्बन्ध है और जीवन में उसका क्या उपयोग है? अर्थशास्त्र, राजनीति, चिकित्सा विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान आदि जिस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से हमारे लिए उपयोगी है, क्या उसी प्रकार साहित्य का भी जीवन में कोई उपयोग हो सकता है और इसके द्वारा क्या हमारी भौतिक समस्याओं का यथार्थवादी समाधान मिल सकता है? इसका उत्तर 'हाँ' है। अवश्य इसका उपयोग हो सकता है और हमारी समस्याओं का समाधान भी मिल सकता है। मानव विज्ञान के क्षेत्र में बहुत आगे जा चुका है। साहित्य मानव

जीवन की असफलता और निराशा की दशा में आशा का संचार करता है। वैयक्तिक सुख-दुःखों को साधारणीकरण द्वारा सामाजिक सुख-दुःख बना देना साहित्य की विशेषता है। अतः सामाजिक भावना और चेतना को बनाने-बिगाड़ने का काम साहित्य का ही है। साहित्य मरणशील व्यक्तियों को भी अमर बनाकर सुरक्षित रखता है। लेकिन शर्त यह है कि उन व्यक्तियों में महान गुणों का होना आवश्यक है। प्राचीन महापुरुषों को आज हमारे बीच जीते जागते रूप में प्रस्तुत करने का काम साहित्य ही करता है।

साहित्य भावों विचारों को साकार और सजीव बनाता है। वास्तविक बात तो यह है कि शास्त्र और विज्ञान तो जीवन का सार निचोड़ देते हैं, लेकिन जीवन की यथार्थरूपी धारा को अखंडित और पूर्णरूप से प्रभावित करते रहना साहित्य का ही कार्य है। साहित्य की व्यापकता का अनुभव हम और प्रकार से भी करते हैं। किसी भी देश, जाति अथवा युग का साहित्य समूची मानवता को प्रभावित करने की शक्ति रखता है। अतः देश, राष्ट्र, जाति, वर्ग की संकुचित भावनाओं की परिधि से बाहर विश्वव्यापी मानवता की भावना के विकास के लिए साहित्य का कार्य महत्वपूर्ण है। साहित्य बाहरी दुनिया के साथ-साथ हमारे भीतर की मन की दुनिया का भी चित्रण करता है। और इसके द्वारा हमारे अन्तस् के रहस्य का उद्घाटन करता है। अतः साहित्य का बड़ा प्रभाव है। वह हमारे जीवन को हमेशा नई-नई प्रेरणाओं से भरता है। इसलिए साहित्य का हमारे जीवन में शाश्वत महत्व है।

साहित्य और समाज –

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। आज मनुष्य ने जो प्रगति की है उसमें साहित्य का प्रमुख योगदान है। मानव और मानव समाज की विकास यात्रा में जिसे परंपरा कहा जाता है, उस परंपरा को निर्मित करने का, उसमें सुधार लाने का उसे वर्तमान के साथ जोड़कर प्रासंगिक बनाने का कार्य साहित्य करता है। साहित्य मानव को मानवता सिखाता है। इस प्रकार मानव को मानव और ऐसे मानवों के समुह से निर्मित समाज निर्माण में साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान होता है। मानव और मानव समाज परिवर्तनशील है और परिवर्तन के दौर में हमें अतीत और वर्तमान को जोड़कर जो अच्छा है उसे ग्रहण करने की और जो बुरा है उसे निर्भीक रूप से त्यागने की क्षमता और साहस दिखाना चाहिए तभी मानव समाज का भविष्य बेहतर हो सकता है। निःसंदेह कहा जा सकता है कि साहित्य ही हमें अच्छे बुरे की पहचान करवाकर उपर्युक्त क्षमता को विकसित करने में सहायक हो सकता है।

साहित्य समाज का केवल प्रतिरूप ही नहीं होता बल्कि उसमें समाज को सही दिशा देने की शक्ति भी होती है। राष्ट्र निर्माण के मूल्य होते हैं और सृजन की क्षमता होती है। साहित्य के केंद्र में यदि राष्ट्र नहीं उसकी अस्मिता नहीं, उसकी अपनी जमीन नहीं और उसकी अपनी मूल्यगत पहचान नहीं तो उसे साहित्य नहीं, अपितु मनुष्य का गैर आवश्यक उत्पाद मात्र ही माना जाएगा। किसी भी समाज का उत्थान और पतन बहुत कुछ साहित्य पर निर्भर है। साहित्य में जो जीवनदायिनी शक्ति है, वह किसी औषधि में नहीं। यदि साहित्य न होता तो समाज और देश का कल्याण नहीं हो सकता था। साहित्य का मुख्य उद्देश्य आनंद द्वारा राष्ट्र और समाज का हित करना है। साहित्य मनुष्य के जीवन और जगत, आत्मा और परमात्मा, राष्ट्र और समाज, आनंद और विषाद, महानता और हीनता का एक सबल मापदंड है। साहित्य मनुष्य जीवन के अनुभवों तथा अनुभूतियों का विराट रूप है। साहित्य मानव विकास में जितना सहायक होता है उसी प्रकार समाज विकास में भी उसका दायित्व उतना अधिक होता है। समाज में साहित्य के माध्यम से विचार तरंगें प्रवाहित होती हैं। इन तरंगों से समाज की गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं। साहित्य समाज की आधारशीला है। साहित्य समाज को जागृत रखता है। समाज में सुख-दुःख, शांति-अशांति,

युद्ध अनेकानेक स्थितियों की प्रेरक शक्ति साहित्य बन जाता है। साहित्य की प्रेरणा से समाज में आनेवाला परिवर्तन अधिक स्थायी होता है। साहित्य मानव-जीवन को संदेश उपदेश के साथ मनोरंजन और आनंद से भर देता है।

साहित्य में साहित्यकार सामाजिक समस्याओं, विचारों तथा भावनाओं का चित्रांकन करता है। संवेदना और कलात्मकता की अभिव्यक्ति ही साहित्य है। साहित्य जहां समाज को प्रभावित करता है वहीं वह समाज से प्रभावित भी होता है। समाज के उथल-पुथल से साहित्य भी प्रभावित होता है। संत कबीर ने अपने समय के बाह्य आडम्बरों, सामाजिक कुरीतियों के विरोध में अपनी आवाज उठाई। इसी तरह प्रेमचंद ने उपेक्षित वर्गों की हृदय विदारक समस्याओं का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में किया। इसके द्वारा समाज में एक नई स्फूर्ति, चेतना एवं जागृति प्रदान की। साहित्य के लक्षणों के बारे में प्रेमचंद कहते हैं कि हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते बल्कि हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो। जो हम में गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाये नहीं। प्रेमचंद एक क्रांतिकारी कलाकार थे। साहित्य के द्वारा समाज का उद्धार एवं उत्थान करना उनका ध्येय रहा। साहित्य समाज का दर्पण है, इससे अभिप्राय यही है कि साहित्य समाज का न केवल चित्र है अपितु समाज के प्रति उसका दायित्व निर्वाह भी है। समाज में फैली अनैतिकता, अराजकता, निरंकुशता को साहित्य बड़े ही मर्मस्पर्शी रूप में हमारे सामने लाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि साहित्य और समाज एक-दूसरे पर आश्रित है, अवलम्बित है। जिस समाज की जैसी परिस्थितियाँ होंगी वैसा ही उसका साहित्य होगा। साहित्य समाज की प्रतिध्वनि, प्रतिछाया और प्रतिबिम्ब है। वर्तमान साहित्यकारों का यह कर्तव्य बनता है कि आज के दिशाहीन, स्वार्थलोलुप समाज को सही दिशा में लेकर जाए। वे ऐसे साहित्य का निर्माण करें जिससे देश के आत्म-गौरव और गरिमा में बढ़ोतरी हो। देश के सर्वांगीण विकास में साहित्य की भूमिका सर्वोपरि है।

2.3.2 सिनेमा का महत्त्व –

आज हम इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक के दौर से गुजर रहे हैं। दुनिया आज बहुत ही गतिमान बन चुकी है। विज्ञान के तरह-तरह के आविष्कारों ने दुनिया का चेहरा पूरी तरह से बदल दिया है। आज जीवन के हर क्षेत्र में इसका प्रवेश हो चुका है। बीसवीं शती के शुरुआत में दुनिया इतनी गतिमान नहीं थी जितनी की आज दिखाई देती है। एक शताब्दी के फासले ने कितना कुछ बदल दिया है। आज का युग जनसंचार माध्यमों का युग है। रेडियो, दूरदर्शन और सिनेमा जनसंचार के प्रमुख दृश्य-श्रव्य माध्यम हैं। आज हमारा जीवन हर पल दृश्य-श्रव्य जगत में साँस ले रहा है। दृश्य-श्रव्य माध्यमों द्वारा झूठा-सच आसानी से स्थापित किया जा सकता है। अतः इन माध्यमों में निहित सम्मोहक शक्ति का प्रयोग कर भ्रमंडलीकरण के पक्षधर अपने मनचाहे विचारों को स्थापित करने के लिए इन माध्यमों पर पूरा नियंत्रण रखते हैं। साथ ही इन माध्यमों का प्रयोग अफीम के नशे की तरह समाज को स्वप्नील नींद सुलाने में करते हैं। जनसंचार माध्यमों में सबसे सशक्त माध्यम सिनेमा है। आज यदि सबसे ज्यादा प्रभाव जिस माध्यम का है, वह सिनेमा का ही है। हमारे रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन से लेकर चिंतन तक सिनेमा की गहरी पहुँच है। समूची मानवीय सभ्यता का यथार्थ जिस माध्यम से आज हमारे सामने उपस्थित है, उसमें सिनेमा की भूमिका अग्रणी है। सिनेमा का सौ साल का सफर हमारा-आपका और समूची मानव सभ्यता के विकास का सफर है। इस सफर ने देश की कई पीढ़ियों से साक्षात्कार किए हैं। सिनेमा ने एक

उभरते हुए देश को आकार दिया है। भारतीय, हिंदी सिनेमा ने जनसामान्य के अवचेतन जीवन को संबोधन और स्थिर भावों को गति प्रदान की है। सिनेमा में बहुसंख्यक समाज अपने समग्र तेवर, कलेवर, अपने संपूर्ण चरित्र और व्यवहार के साथ हजारों गीतों, संवादों, पात्रों, किस्से- कहानियों में मौजूद है। बॉलीवुड ने हमें ही नहीं हमारे देश व समाज को अपने समय के हिसाब से फैशन करना सिखाया, सामाजिक बदलाव को स्वीकार करने की समझ दी, जोर-जुल्म के खिलाफ इन्कलाब का जज्बा दिया और हमारी भावनाओं को दृश्य-शब्द की समझ दे दी हैं।

भारतीय सिनेमा अपने शुरुआती दौर से ही लगातार परिवर्तनोन्मुखी रहा है। शुरू में सिनेमा का लक्ष्य समाज से जुड़ी समस्याओं को उठाना था। आजादी के बाद सिनेमा में राष्ट्रवाद का पुट आया। इसके साथ-साथ शासन और प्रशासन के खिलाफ विद्रोह की प्रवृत्ति भी जन्म लेने लगी थी। छोटे-मोटे बदलाव के साथ सिनेमा लगातार समाज को बदलने का कार्य कर रहा था। सिनेमा ने अपने उद्भव के प्रारंभ से ही कुप्रथाओं को खत्म करने का प्रयास किया। सिनेमा लोकप्रिय और रचनात्मक माध्यम है, वह वैचारिक मानस की निर्मिती में हमारी बहुत मदद करता है। वह प्रतीकों को गढ़ता रचता है। कई विद्वान सिनेमा को आधुनिक युग का जादू कहते हैं। वह परंपरावादी एवं रूढ़िवादी समाज में परिवर्तन, जागरूकता और सुधार लाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। सिनेमा कला में एक तरह की व्यापकता है, जो करोड़ों लोगों के पास ले जाती है, और वह भी बहुत आसानी से। सिनेमा के इस व्यापक प्रभाव को हर कोई महसूस करता है। भारतीय सिनेमा मनोरंजन के साथ-साथ जागरूकता और सामाजिक परिवर्तन का भी महत्वपूर्ण काम कर रहा है। समाज निर्माण में अन्य माध्यमों की तरह सिनेमा की भी एक उल्लेखनीय भूमिका है। सिनेमा अपने संदेश को जन-जन तक पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम है। मास मीडिया में सबसे सशक्त माध्यम के तौर पर फिल्म का प्रभाव जनता पर सबसे अधिक पड़ता है, इसमें पढ़े-लिखे लोगों से लेकर गरीब जनता तक सम्मिलित होती हैं। सिनेमा एक ऐसी कला है, अभिव्यक्ति का एक ऐसा माध्यम है, जिसमें साहित्यकला, चित्रकला, वास्तुकला, संगीतकला, नाट्यकला, नृत्यकला सभी कलाओं का योग अपेक्षाकृत स्पष्टता से देखा जा सकता है। इसके बावजूद एक स्वतंत्र कला के रूप में उसकी अपनी विशेषता है, जिसकी उपेक्षा करने पर उसके मर्म तक पहुँचना सम्भव नहीं है। निःसंदेह सिनेमा को आज दृश्य-श्रव्य माध्यम की एक प्रमुख कला के रूप में स्वीकृति मिल चुकी है। उपरोल्लिखित सभी कलाएँ सिनेमा से प्रभावित हुई हैं। सिनेमा आज के समाज में संवहन का सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम है, जैसा कि यह शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावनाओं की वृद्धि का एक सबलतम साधन है। सिनेमा के सकारात्मक पक्ष का उद्देश्य एक अच्छे समाज का निर्माण, समाज के यथार्थ को सामने लाना है।

सिनेमा और समाज -

मानव जीवन और समाज को प्रभावित करनेवाले विभिन्न माध्यमों में सिनेमा वह माध्यम है, जो समाज को भी प्रभावित करता है और प्रतिबिम्बित भी करता है। भारत में सिनेमा को सौ साल हो चुके हैं। पिछले कई दशकों के फैलाव में कई पीढ़ियाँ सिनेमा में सक्रिय रही, उन्होंने अपने-अपने तरीके से सिनेमा को गढ़ा। सिनेमा में यह क्षमता पैदा की कि वह हमारी जीवन शैली का हिस्सा बन सके, क्योंकि सिनेमा जहाँ समाज को प्रतिबिम्बित करता है, वही निकलता भी उसी समाज से है। सिनेमा के भीतर समाज की मौजूदगी दिखती है और उसमें सैकड़ों साल का अपना समाज कई रूपों में प्रतिबिम्बित होता है। हिंदी सिनेमा समाज का एक प्रमाणित और वैज्ञानिक दस्तावेज भले न हो लेकिन एक समाज उसके भीतर से रिफ्लेक्ट होता है। हम सभ्यता के और

समय के जिस बिंदु पर खड़े हैं वहाँ सिनेमा हम पर असर डालता है। हम हिन्दी सिनेमा के परिप्रेक्ष्य में देखें तो स्वतंत्रता के बाद की अधिकांश फिल्मों लाभ के मसौदे के लिए तैयार न होकर जन सरोकार और जन-पक्षधर मूल्यों को समर्पित थी। सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संचेतना का निर्माण इनका मुख्य लक्ष्य था।

सिनेमा ने हमेशा भारतीय समाज को एक विस्तृत क्षितिज प्रदान किया है। सिनेमा ने अपने समकालीन दौर की परिस्थितियों, चिंताओं और संघर्ष की अभिव्यक्ति पूरे आत्मविश्वास तथा दृढ़ता से की है। सिनेमा ने अक्सर समाज की दशा को दिशा देने का काम भी बखूबी किया है। फिर चाहे देश में व्याप्त सामाजिक रूढ़ियों एवं कुरीतियों पर प्रहार करने की बात हो या बेरोजगारी, बेगारी, गरीबी, अशिक्षा की समस्या को प्रमुखता से सामने रखने की बात हो। फिल्म जगत ने फिल्मों के माध्यम से समाज में साम्प्रदायिक एवं जातिगत सौहार्द्र का वातावरण बनाने में भी अपनी भूमिका के साथ न्याय किया है, यहीं नहीं अनेक व्यवस्थाजन्य समस्याओं जैसे उग्रवाद, नक्सलवाद, आतंकवाद की तह तक पहुँचने तथा जनादेश को समझने में तथा सामंतवादी व्यवस्था, लालफीताशाही और भ्रष्टाचार के विरुद्ध जनाक्रोश एवं विद्रोह को हथियार बनाकर उनके विरुद्ध में माहौल बनाने में, साथ ही साथ उनके संभावित समाधानों को दिखाने में भी फिल्म जगत ने अमूल्य योगदान दिया है। फिल्मों ने देश के हर वर्ग में भाईचारे और देशभक्ति की भावना को प्रसारित करने में भी अहम् भूमिका निभाई है। फिल्मों ने आज जहाँ नारी को बाजार में खड़ा कर दिया है वही फिल्मों के माध्यम से ही नारी के महत्त्व एवं समाज में उसके विभिन्न स्वरूपों को महिमा मंडित करने के प्रयास भी किए गए हैं। इसके अलावा क्षेत्रीय या देशज भाषाओं एवं राष्ट्रभाषा हिंदी के उत्थान एवं उन्हें निकट लाने में फिल्मों का अभूतपूर्व योगदान रहा है। इसी तरह गीत-संगीत, नृत्य को प्रश्रय देने तथा आगे बढ़ने में फिल्मों का विशेष योगदान रहा है। अतः सिनेमा ने समाज को बहुत कुछ दिया है इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता।

साहित्य, सिनेमा और समाज -

साहित्य और सिनेमा समाज के अभिन्न अंग हैं। दोनों ही कलाएँ समाज में जन्म लेती हैं और अंततः समाज को प्रभावित करती हैं। सिनेमा और साहित्य दोनों ही कला प्रकार हैं और दोनों कलाओं का उद्देश्य समाज की समस्याओं को चित्रित करना उन समस्याओं का समाधान अपनी कृति के माध्यम से समाज तक पहुँचाना है। साहित्य और सिनेमा दोनों भी कलाओं का एक-दूसरे से परस्पर संबंध है। और यह दोनों विधाएँ साथ मिलकर समाज सुधार की भूमिका निभाती है तो निश्चित ही देश का सामाजिक स्तर विकसित होगा। ऐसी स्थिति में आवश्यकता इस बात की है कि सरकारी एवं सामाजिक दोनों स्तरों पर ऐसी कोशिश की जानी चाहिए कि सिनेमा आधुनिक तकनीक वाली साहित्य विधा के रूप में प्रतिष्ठित हो सके और समाज निर्माण में उसकी भी अहम् भूमिका बने। क्योंकि सिनेमा माध्यम का करोड़ों लोगों के जीवन पर असर पड़ता है। लोग अपने जीवन के बहुत से तौर तरीके सिनेमा से सीखते हैं। इसलिए ऐसे माध्यमों के प्रति थोड़ी भी अगंभीरता समाज का बहुत बड़ा नुकसान कर सकती है। इसके लिए हमें सचेत रहने की आवश्यकता है। साहित्य और सिनेमा दोनों समाज को प्रभावित कर रहे हैं।

भारतीय समाज में साहित्य की अपेक्षा सिनेमा का व्यापक प्रभाव समाज पर पड़ रहा है। भारतीय समाज आज के समय में सिनेमा से जितना प्रभावित है उतना अन्य किसी माध्यम से नहीं है। लेकिन मानव और मानव समाज के विकास में साहित्य की भूमिका विशेष रूप से दिखाई देती है। आज के विज्ञान और तकनीकी युग में भी साहित्य का महत्त्व कम नहीं हुआ है। साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज की समस्याओं,

अच्छाइयों-बुराइयों को समाज के सामने रखता है। और उन समस्याओं से लड़ने का उपाय भी साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करता है। फिल्म निर्देशक भी वही करता है, जो एक साहित्यकार करता है। दोनों के केंद्र में समाज ही होता है। जिस प्रकार साहित्यकार समाज से प्रभावित होता है उसी प्रकार फिल्मकार साहित्य से प्रभावित होता है और समाज से भी! एक अच्छा फिल्म निर्देशक साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओं को पर्दे पर उतारकर समाज के सामने जीवंत दृश्यों का निर्माण करता है। फिल्म के जन्म से लेकर अब तक विश्व साहित्य की विविध भाषाओं की कृतियों पर फिल्में बनी हैं। उसमें भारतीय भाषाओं की कृतियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साहित्य और सिनेमा दोनों में जीवनोपयोगी उपदेश देने की क्षमता विद्यमान रहती है। साहित्य के बिना समाज अपूर्ण है और समाज के बिना साहित्य और सिनेमा अपूर्ण है। साहित्य और सिनेमा अपनी-अपनी जगह श्रेष्ठ है। साहित्य का ध्येय समाज का हीत है और फिल्म का ध्येय समाज को मनोरंजन प्राप्त कराना है, साथ ही समाज को आईना दिखाना भी है।

2.3.3 हिंदी कथा साहित्य पर बनी फिल्मों का रसग्रहण –

साहित्य, संगीत, अभिनय, गायन, चित्रकला, शिल्प आदि से लेकर आधुनिकतम तकनीकी कलारूपों का समुच्चय सिनेमा के निर्माण में सहयोगी बनता है। कथावस्तु सिनेमा का आधारभूत तत्त्व है। इसलिए हिंदी कथा साहित्य और सिनेमा के बीच एक पुल बना। इसके साथ ही हिंदी सिनेमा में सिर्फ हिंदी भाषा के साथ-साथ भारतीय और विदेशी भाषाओं की कृतियों पर अनेकानेक फिल्मों का निर्माण हुआ है। आधुनिक हिंदी साहित्य की ऐसी चंद ही कृतियाँ हैं जिस पर स्तरीय फिल्मों का निर्माण हुआ। महान रचनाकारों की प्रख्यात कृतियों को भी हिंदी सिनेमा ने अनदेखा किया। हिंदी साहित्य और सिनेमा का संबंध बहुत गहरा और पुराना है। जब पन्नों पर बिखरे शब्द पर्दे पर जीवंत होते हैं, तो साहित्य का रस और सिनेमा की दृश्य-विजुअल शक्ति मिलकर एक अद्भुत अनुभव पैदा करते हैं। साहित्य के रसास्वादन के लिए सुशिक्षित होने की आवश्यकता होती है। पर सिनेमा समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुंचता है। उसकी परिधि में शिक्षित, अशिक्षित, सरस और नीरस सभी किस्म के व्यक्ति आते हैं।

प्रेमचंद, अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा, सुदर्शन, उपेंद्रनाथ अशक आदि साहित्यकार आरंभिक दौर में सिनेमा से जुड़े लेकिन अंततः वे निराश होकर ही पुनः अपने क्षेत्र में वापस लौट आए। इस दृष्टि से समग्रता से हिंदी के पठनीय लेखक हैं जिन्होंने सिनेमा और टेलीविजन के क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित कर दिखाया। आइए हिंदी के तीन कालजयी साहित्यकार फणीश्वरनाथ रेणु, कमलेश्वर और मन्नू भंडारी की कृतियों पर बनी फिल्मों के माध्यम से इसका रसग्रहण करते हैं।

2.3.3.1 तीसरी कसम (फणीश्वरनाथ रेणु) –

आंचलिक फणीश्वरनाथ 'रेणु' की सर्वाधिक लोकप्रिय और लंबी कहानी 'मारे गए गुलफाम' प्रथम कहानी संग्रह 'तुमरी' से प्रकाशित हुई। इस कहानी पर महान फिल्मकार बासु भट्टाचार्य ने 'तीसरी कसम' नाम से 1967 में फिल्म बनायी। जिसके निर्माता और गीतकार शैलेंद्र थे। फिल्म निर्माण के पीछे स्व. शैलेंद्रजी का सारा धन खर्च हो गया और फिल्म की विफलता से उन्हें जो सदमा पहुँचा वह जान लेना सिद्ध हुआ। कहानी के मुख्य पात्र हीरामन और हीराबाई का अभिनय राजकपूर और वहीदा रहमान ने किया था। 'तीसरी कसम' फिल्म का प्रथम शो देखने रेणुजी गये थे। वे वहीदाजी के अभिनय से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी बेटी का नाम वहीदा रख दिया। यह फिल्म हिंदी सिनेमा की सबसे बेहतरीन 'आर्ट फिल्मों' में से एक मानी जाती है। इस फिल्म को राष्ट्रपति स्वर्णपदक और राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

कहानी का कथ्य बैलगाड़ी चालक हीरामन (राजकपूर) और नौटंकी कंपनी की हीराबाई (वहीदा रहमान) की मूक प्रेम कथा है। इसमें बिहार का आंचलिक जनजीवन, सहज मानवीयता, रीति-नीति, स्वार्थ, संघर्ष स्पष्ट उभरकर सामने आता है। पिछले बीस वर्षों से कहानी का नायक हीरामन गाड़ी हाँकता है। वह जोगबनी से विराटनगर तक चोर बाजारी का माल पहुँचाता है। परंतु सीमा से इस बार तराई में उसकी गाड़ी पाँचवीं बार पकड़ी गई। तो वह पोलीस से बचने के लिए वहाँ से भाग गया। तब उसने पहली कसम खाई थी कि अब चोरी की ऐसी चीजें नहीं लादेगा। इसके बाद बाँस की गाड़ी भरकर जा रहे थे तभी लंबी बाँस के कारण दूसरी गाड़ी से टकराता है तब उसे गाड़ीवाले मारते हैं। तब वह दूसरी कसम लेता है बाँस लादने के लिए पचास रुपये भी दे तो कोई हीरामन की गाड़ी नहीं मिलेगी। वह दूसरी कसम उठाने के बाद वह सबसे पहले पूछ लेता था कि इसमें चोरी चकारी वाली चीज और बाँस तो नहीं है। और इस बार यह जनानी सवारी है। जिससे चंपा का फूल जैसी खुशबू आती है। क्योंकि जब से गाड़ी में बैठी है उसे गाड़ी में फूल की महक आ रही थी। इस शांत सवारी के कारण वह डरता है। उसे नौटंकी बाई न बोलने से भूत पिशाच का डर लगता है। वह एक मंदिर के जगह रुक कर मनत मांगकर इस ब्रा से बच गया तो ईश्वर को प्रसाद चढ़ाऊंगा। इस तरह एक सीधा-साधा निश्चल बैलगाड़ी चालक है। उसकी गाड़ी पर हीराबाई नाम की एक नौटंकी कलाकार सवार है। सवारी के समय चांदनी में नायिका का मुख दिखने से हीरामन उछल जाता है। उसे वह परी जैसी लगती है। फिल्म में दोनों में आत्मीयता निर्माण होती है, संवाद चलता है, नाम परिचय आदि होता है। सबकी नजर बचाकर हीराबाई को मेले में पहुँचाता है। उसके बाद वह हीराबाई के कहने पर नौटंकी कंपनी में उसी का नाच देखने जाता है। हीराबाई को रंडी या वेश्या कहने वालों के साथ लड़ाई झगड़ा करता है। हीराबाई उसे बुलाकर डांटते हुए कहती हैं कि किस- किस का मुंह बंद करोगे। दोनों में अपनापन बढ़ जाता है।

हीरामन गाड़ी के सवारी से कमाएँ पैसे चोरी होने के डर से हीराबाई के पास रखता है। कहानी और फिल्म के अंत में जब हीराबाई नौटंकी कंपनी के साथ वापस जाती है तब हीरामन को मिलने के लिए स्टेशन पर बुलाती है। हीराबाई का उससे प्रेम हो गया है स्टेशन पर काफी इंतजार करने पर हीरामन आ जाता है। उस समय के मुक संवाद से दर्शकों में निशब्दता छा जाती है। उसके पैसे वापस देती है। हीराबाई खलनायक जमींदार के द्वारा हीरामन को मारने की धमकी देने की वजह से वह दुखी मन से अपने प्यार की कुर्बानी देती हैं। उसके जाने के बाद हीरामन 'तीसरी कसम' खाता है कि अब कभी अपनी गाड़ी पर नौटंकी वाली (कंपनी की औरत) को नहीं बैठाएगा। यह तीसरी कसम उसके गहरे दर्द और कभी पूरे होने वाले प्रेम का प्रतीक है।

निष्कर्षतः 'तीसरी कसम' फिल्म का रसग्रहण करते समय हीरामन और हीराबाई के बीच का प्रेम कोई वासना या आम फिल्मी रोमांस नहीं है। यह दो नितांत अकेले आत्माओं का मूक जुड़ाव है। हीरामन के लिए हीराबाई एक 'देवी' की तरह है जबकि हीराबाई को हीरामन के सीधेपन में दुनिया का सबसे सच्चा सुकून मिलता है। फिल्म में रेणुजी के आंचलिक (Regional) स्वाद को पूरी तरह बचाकर रखा है। 'चलत मुसाफिर मोह लियो रे', दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में, मारे गए गुलफाम और 'सजन रे झूठ मत बोलो' जैसे गीत कहानी की आत्मा को सुर देते हैं। अंत में जब हीराबाई हमेशा के लिए चली जाती है, तो टूटा हुआ हीरामन अपनी जिंदगी की तीसरी कसम खाता है।

2.3.3.2 आँधी (कमलेश्वर) –

उपन्यासकार कमलेश्वर ने 'काली आँधी' उपन्यास के माध्यम से समाज में विखंडित होते दाम्पत्य जीवन संबंधों में बिखराव इन सब के बीच स्वार्थलिप्त राजनीति से उपजे दुःख-दर्द को एक नये आकार में प्रस्तुत किया है। इस पर गुलजार के निर्देशन में बनी फिल्म 'आँधी' का निर्माण 1975 में हुआ है। निर्देशक गुलजार ने मूल उपन्यास के कथ्य को पटकथा में ढालकर जहाँ उपन्यास के कथावस्तु विन्यास को जीवित रखा है। वही सिनेमा की अपनी सीमाओं को ध्यान में रखकर अनावश्यक प्रसंगों को छोड़ दिया है। यह फिल्म राजनीति और पारिवारिक रिश्तों के बीच पीसते हुए किरदारों की कहानी है।

'आँधी' फिल्म की नायिका आरती देवी (सुचित्रा सेन) एक शक्तिशाली राजनीतिज्ञ है। उसका पति और फिल्म नायक होटेल मैनेजर जे.के. (संजीव कुमार) मालती देवी की तरह महत्वाकांक्षी नहीं है किंतु वे सहृदय और अटूट साहस के धनी व्यक्ति हैं। फिल्म में नायक के रूप में संजीव कुमार ने अद्भुत अभिनय किया। इस फिल्म के बाद गुलजार और कमलेश्वर के बीच कुछ मतभेद भी हुए जिनका होना अवश्यभावी था। गुलजार स्वयं भी एक सशक्त लेखक हैं इसलिए दो स्वाभिमानों का टकराव अवश्यभावी है। इसमें कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। पर गुलजार-कमलेश्वर युति से जिन फिल्मों का जन्म हुआ, वे हिंदी सिनेमा के इतिहास में अपनी खास जगह रखती हैं। नायिका मालती देवी (आरती देवी) का चरित्रांकन भारत की पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी के व्यक्तित्व से मेल खाता है। इस कारण 'आँधी' फिल्म की अधिक चर्चा हुई थी। इसलिए उपन्यास और फिल्म दोनों को ही विरोध का सामना करना पड़ा था। सन 1976 में इस फिल्म को फिल्मफेयर पुरस्कार से सम्मानित किया है।

सन् 1975 में फिल्म और उपन्यास का लेखन एक साथ हो गया था। ऐसा कहा जाता है कि गुलजार ने 'आँधी' फिल्म का लेखन पहले शुरू किया था बाद में कमलेश्वर को इस पर उपन्यास लिखने के लिए कहा। यहाँ 'आँधी' नाम पहले गुलजार ने फिल्म के लिए तय किया था। इसके बाद उपन्यास का नाम 'काली आँधी' रखा गया था। उपन्यास में नायिका का मालती देवी नाम रखा था वहीं फिल्म में आरती देवी नाम रखा था। नायक जग्गी बाबू का नाम जे.के. रखा था। इस कथावस्तु के केंद्र में एक असफल दाम्पत्य की करुण कहानी है। लेखक ने मालती देवी और जग्गी बाबू के माध्यम से देश में व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार, छल-कपट को उद्घाटित किया है। राजनीतिक समस्या के कारण जग्गी बाबू और मालती देवी इन दोनों पति-पत्नी में तनाव पैदा होता है। इसके साथ-साथ फिल्म में देश व्याप्त भ्रष्टाचार को भी प्रमुखता से दर्शाता है। मालती देवी महत्वाकांक्षी है। वह पूँजीवादी व्यवस्था का समर्थन करती है। जग्गीबाबू गंदी राजनीति से चिंतित हैं। वे ऐसी राजनीति से घृणा करते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी देश में जो राजनीतिक अस्थिरता निर्माण हुई इसका चित्र प्रस्तुत है।

कमलेश्वर के लेखन और गुलजार के निर्देशन ने यह दिखाया कि जब एक स्त्री सत्ता के शिखर पर पहुँचती है, तो उसे अपनी निजी जिंदगी की क्या किमत चुकानी पड़ती है। आरती देवी और जे. के. के बीच मौन और ठहराव दर्शकों के दिल को छू जाता है। फिल्म के संवाद और परिपक्वता बहुत गहरे हैं। जब दोनों बरसों बाद मिलते हैं, तो कोई चीख-पुकार नहीं होती, बल्कि एक ठहरा हुआ दर्द होकर उभरता है। आर. डी. बर्मन का संगीत और गुलजार के लिखे गीत जैसे – 'तेरे बिना जिंदगी से कोई शिकवा तो नहीं' या 'तुम आ गए हो नूर आ गया है' फिल्म के समानांतर चलते हैं और किरदारों की मानसिक स्थिति को बयाँ करते हैं। प्रमुख पात्र के रूप में नेता चंद्रसेन के बोस (के. बोस) गुरुशरण, जे. के. और आरती देवी इकलौती बेटी 'मुन्नी' और घर का पुराना सेवक ब्रिंदा का महत्त्वपूर्ण पात्र है। ब्रिंदा काका नौकर होते हुए भी घर के सबसे महत्त्वपूर्ण सदस्य हैं। निष्कर्षत एक स्त्री

के अदम्य साहस और जे. के. के अगाध आदर, पीड़ा और निस्वार्थ प्रेम की कथा को जहाँ कमलेश्वर ने पूँजीवादी समाज की अंतर्द्वंद्व की त्रासदी की पृष्ठभूमि में अंकित किया है, वहीं फिल्मकार ने इसे एक गहन मानवीय संवेदना की कथा के रूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास और फिल्म दोनों में यथार्थ और कल्पना का अत्यंत सुंदर समन्वय है।

2.3.3.3 रजनीगंधा (मन्नू भंडारी) –

बासु चटर्जी के निर्देशन में बनी ‘रजनीगंधा’ (1974) हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भंडारी की कहानी ‘यही सच है’ पर आधारित है। यह फिल्म मध्यम वर्ग (Middle class) के सिनेमा की शुरुआत करनेवाली बेहतरीन फिल्म है। फिल्म की पटकथा और संवाद निर्देशन बासु चटर्जी, गीत आलेखन डी. ओ. झेलानी, गीत-योगेश, पार्श्वगायक लता मंगेशकर और मुकेश, निर्माता-सुरेश जिंदल आदि रहे हैं। फिल्म का नायक संजय (अमोल पालेकर), नायिका दीपा (विद्या सिन्हा), ईरा (रंजीता ठाकुर), नवीन (दिनेश ठाकुर) आदि। कोई भी कथा एक व्यक्ति लिख सकता है किंतु, फिल्म का निर्माण अनेक व्यक्तियों के सहयोग से ही संभव हो पाता है। यह कहानी एक त्रिकोणीय प्रेम संबंधों पर आधारित है। जिसके मध्य में एक लड़की और दो लड़के हैं। यह कहानी सत्य घटना पर आधारित है। इस फिल्म को फिल्मफेयर अवार्ड 1975 में मिला है। मन्नू भंडारी अपनी आत्मकथा ‘एक कहानी यह भी’ में ‘यही सच है’ कहानी के संदर्भ में लिखती हैं कि उस समय जितनी चर्चित यह कहानी हुई, उतनी ही इस पर बनाई फिल्म ‘रजनीगंधा’ भी चर्चित हुई थी। कथा और फिल्म दोनों में कथा और संवाद बहुत कुछ एक से हैं, केवल थोड़ा अंतर है, जो कि फिल्म को ध्यान में रखकर बनाया गया है।

फिल्म का प्रारंभ एक स्वप्न से होता है जो कि, अवचेतन मन में चल रहा होता है। जिसका संबंध उसके जीवन से होता है। दीपा ट्रेन से जा रही है और ट्रेन में कोई नहीं, जब वह ट्रेन से उतरती है तो ट्रेन छूट जाती है और वह स्वप्न से हड़बड़ाकर उठ जाती है। तब तक उसकी भाभी आ जाती है और कहती है ‘चल उठ गई, चाय तैयार है।’ जबकि कहानी में ऐसे किसी भी दृश्य का चित्रण नहीं मिलता। देखा जाय तो कहानी में कहीं भी भैया और भाभी नहीं हैं। दीपा पी.एच.डी. की पढ़ाई कर रही है किंतु वह अपनी पढ़ाई नहीं कर पा रही है क्योंकि वह संजय नामक युवक से प्रेम करती है एक साथ पढ़ते हैं लेकिन उनकी मुलाकात अंतिम दो पेपर रहने के समय होती है। आगे जाकर वह उसके ख्यालों में और उसके इंतजार में सारा समय यूं ही बिता देती बैठती है। दीपा से मिलने संजय समय के पहले कभी नहीं आता था हमेशा एक-दो घण्टे देरी से आता है। किन्तु जब भी दीपा से मिलता है सुगंध से भरे ताजा रजनीगंधा के फूल मुस्कुराते हुए देता है और दीपा की नाराजगी को झट से दूर कर देता है। दोनों एक दूसरे से बेहद प्रेम करते हैं और विवाह करना चाहते हैं। किन्तु दीपा को अपनी पढ़ाई समाप्त होने का इंतजार है और संजय को अपनी प्रमोशन का इंतजार है। दीपा एक तरफ तो नवीन (निशीथ) से प्रेम करती है और दूसरी तरफ उसके पुरानी बातों को लेकर नफरत करती है। वह स्वयं ही नहीं जान पा रही है कि वह क्या कर रही है। संजय के साथ रहकर भी वह अपने अवचेतन मन में बैठे नवीन की के साथ बंधी रहती है।

दीपा नौकरी के सिलसिले में इंटरव्यू के लिए मुंबई जाती है। दीपा की सहेली ईरा अपने कार्य में व्यस्त होने के कारण दीपा को लाने नवीन को स्टेशन भेजती है। फिल्म में ईरा नवीन की दोस्त है, जो उपन्यास में नहीं दिखाया। मुंबई में नवीन दीपा की बहुत सहायता करता है नौकरी दिलवाने का प्रयास भी करता है, उसके साथ घूमने, कॉफी पीने तथा आने-ले-जाने में सहायता करता है। दीपा उसकी इस दोस्ती को नकार नहीं पाती और नवीन को संजय के बारे में भी बता नहीं पाती और नवीन की तरफ फिर से आकर्षित होने लगती है। उसके पहले

के प्रेम को सच मानते हुए बहुत सारे सपने देखने लगती है। इस बीच संजय को भी याद करती है किन्तु वह नवीन के साथ फिर से रिश्ता जुड़ने का स्वप्न पाले रहती है। वह नवीन और संजय में तुलना करने लगती है और द्वंद्व में घिर जाती है। नवीन सदैव अपने कहे हुए समय से पहले ही आ जाता और संजय कभी समय से नहीं आता। नवीन दीपा की साड़ियों की तारीफ करता तो संजय को उसकी साड़ियों से कुछ वास्ता नहीं संजय को दीपा हर साड़ी में सुंदर लगती है। इस द्वंद्व में फंसी स्त्री किसे चुने किसे नहीं? दोनों के मध्य विचार और प्रेम की टकराहट दिखाई गई है।

दीपा को संजय और नवीन दोनों से प्रेम है। वह दोनों को भी छोड़ना नहीं चाहती। एक के बारे में सोचती है तो दूसरा आँखों के सामने आने लगता है। नवीन एक अच्छे दोस्त की तरह दीपा की सहायता करता है और चला जाता है। जबकि दीपा नवीन को हमेशा देखती रहती है कि वह कब विवाह की बात कहे। वह सोचती है नवीन आज भी तुम मुझे प्यार करते हो जो कुछ हो गया है उसे भूल कर मुझसे विवाह करना चाहते हो। अंत में दीपा मुंबई से वापस दिल्ली आती है। वह संजय और नवीन के पत्र का इंतजार करती रहती है। जब नवीन के तार आती है मुंबई में उनका सिलेक्शन हुआ है वह घर पर दोपहर खड़ी रहती है और सामने संजय रजनीगंधा के फूल लिये होता है उसे देखकर दीपा के हाथों से नवीन का तार नीचे गिर जाता है। संजय को देखकर, संजय के साथ बिताये सारे पल याद आ जाते हैं और वह तब इस बात का अहसास करती है कि संजय का मुस्कुराता चेहरा और उसका प्रेम भरा आलिंगन ही सत्य है वह जो नवीन के बारे में सोचती है वह सच नहीं, क्योंकि वह उसके साथ काल्पनिक जीवन जी रही होती है और यह काल्पनिक दुनिया चकनाचूर होती है। स्त्री की यह एक समस्या होती है कि वह अपने प्रेम को सदैव विवाह रूपी बंधन में बांधना चाहती है। दीपा, नवीन के मौन स्वभाव की अपेक्षा संजय के खुलेपन को अपनाती है अर्थात् संजय को स्वीकार करती है। प्रत्येक नारी को अपने जीवन का फैसला स्वयं लेना चाहिए सब कुछ सोच विचार कर और सत्य को महसूस करते हुए निर्णय लेती है।

निष्कर्ष: 'रजनीगंधा' फिल्म में एक स्त्री के त्रिकोणीय प्रेम संबंध में उलझी स्त्री का द्वंद्व है। स्त्री मन की संवेदनाओं को टटोलते हुए दीपा जैसी स्त्री चरित्र के द्वारा प्रेम संबंधों का आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया है जहाँ एक स्त्री अपने अस्तित्व तलाश में कभी संजय से तो कभी नवीन से टकराती है। परंतु यह टकराहट भी प्रेम संबंधों का उत्कर्ष रूप है। मानसिक द्वंद्व से गुजरते हुए वह कभी स्वीकार और कभी अस्वीकार की पीड़ा में झुलती रहती है और अंत में अपने सच को स्वीकार कर यह सिद्ध करती है कि 'यही सच है'।

8. विश्वव्यापी मानवता की भावना के विकास के लिए साहित्य क्यों महत्वपूर्ण है?
- अ) क्योंकि यह आर्थिक लाभ पहुँचाता है
 ब) क्योंकि यह केवल किसी एक विशेष जाति का इतिहास बताता है
 क) क्योंकि यह केवल बाहरी दुनिया का चित्रण करता है
 ड) क्योंकि यह देश, राष्ट्र, वर्ग आदि की संकुचित भावनाओं की परिधि से बाहर निकालता है
9. जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में से सबसे सशक्त और प्रभावशाली माध्यम किसे माना गया है?
- अ) दूरदर्शन
 ब) सिनेमा
 क) रेडियो
 ड) समाचार पत्र
10. सिनेमा को 'एक ऐसी कला' क्यों कहा गया है जिसमें कई अन्य कलाओं का योग स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है?
- अ) क्योंकि इसमें केवल तकनीक और कैमरों का प्रयोग होता है
 ब) क्योंकि इसमें साहित्य, चित्रकला, संगीत, नाट्य और नृत्यकला सभी का समावेश होता है
 क) क्योंकि यह केवल अमीर लोगों के मनोरंजन का साधन है
 ड) क्योंकि यह केवल विदेशी संस्कृतियों की नकल करता है
11. स्वतंत्रता (आजादी) के ठीक बाद के दौर में अधिकांश भारतीय फिल्मों का मुख्य लक्ष्य क्या था?
- अ) केवल पश्चिमी देशों के फैशन का प्रचार करना
 ब) जन सरोकार, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संचेतना का निर्माण करना
 क) अधिक से अधिक आर्थिक लाभ कमाना
 ड) विदेशी तकनीक का प्रदर्शन करना
12. सिनेमा ने सामंतवादी व्यवस्था, लालफीताशाही और भ्रष्टाचार के विरुद्ध समाज में किस प्रकार की भूमिका निभाई है?
- अ) इन व्यवस्थाओं का समर्थन करके
 ब) केवल मनोरंजन के गीत रचकर
 क) इन समस्याओं की पूरी तरह उपेक्षा करके
 ड) जनाक्रोश एवं विद्रोह को हथियार बनाकर इनके विरुद्ध माहौल तैयार करने में

13. फिल्मों की भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में क्या अभूतपूर्व योगदान रहा है?
- अ) इन्होंने केवल शहरी संस्कृति को ही महत्त्व दिया और ग्रामीण परिवेश को छोड़ दिया है।
 ब) इन्होंने देश की क्षेत्रीय या देशज भाषाओं एवं राष्ट्रभाषा हिंदी को निकट लाने का कार्य किया है।
 क) इन्होंने पारंपरिक लोक नृत्य और संगीत को पूरी तरह समाप्त कर दिया है।
 ड) इन्होंने केवल अंग्रेजी भाषा को बढ़ावा दिया है।
14. हिंदी के पहले ऐसे लेखक हैं जिन्होंने सिनेमा और टेलीविजन के क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित किया है।
- अ) प्रेमचंद
 ब) कमलेश्वर
 क) उपेंद्रनाथ अशक
 ड) सुदर्शन
15. 'तीसरी कसम' फिल्म फणीश्वरनाथ 'रेणु' की किस लोकप्रिय कहानी पर आधारित है?
- अ) ठुमरी
 ब) मारे गए गुलफाम
 क) मैला आँचल
 ड) पंचलाइट
16. फिल्म 'तीसरी कसम' के निर्माता और प्रसिद्ध गीतकार कौन थे?
- अ) बासु भट्टाचार्य
 ब) राजकपूर
 क) शैलेंद्र
 ड) फणीश्वरनाथ रेणु
17. फिल्म में मुख्य पात्र 'हीरामन' और 'हीराबाई' का अभिनय किन कलाकारों ने किया था?
- अ) राजकपूर और वहीदा रहमान
 ब) अमोल पालेकर और विद्या सिन्हा
 क) संजीव कुमार और सुचित्रा सेन
 ड) दिलीप कुमार और वैजयंतीमाला
18. हीरामन ने अपनी बैलगाड़ी को लेकर पहली कसम क्या खाई थी?
- अ) वह कभी नौटंकी वाली को गाड़ी में नहीं बैठाएगा।
 ब) वह कभी बाँस (बांस) नहीं लादेगा।
 क) वह कभी चोरी-चकारी का माल गाड़ी में नहीं लादेगा।
 ड) वह कभी मेला देखने नहीं जाएगा।
19. हीरामन ने दूसरी कसम किस घटना के बाद खाई थी?
- अ) पुलिस द्वारा पकड़े जाने पर
 ब) बाँस लदी गाड़ी के टकराने और मारपीट होने पर
 क) हीराबाई के चले जाने पर
 ड) पैसे चोरी हो जाने पर

20. हीराबाई की गाड़ी में बैठने पर हीरामन को किस फूल की खुशबू का अहसास होता है?
 अ) गुलाब
 ब) चंपा
 क) रजनीगंधा
 ड) गेंदा
21. हीराबाई के हमेशा के लिए चले जाने के बाद दुखी मन से हीरामन 'तीसरी कसम' क्या खाता है?
 अ) वह अब कभी बैलगाड़ी नहीं चलाएगा।
 ब) वह अपनी गाड़ी पर कभी नौटंकी वाली (कंपनी की औरत) को नहीं बैठाएगा।
 क) वह कभी किसी से पैसे उधार नहीं लेगा।
 ड) वह कभी जोगबनी नहीं जाएगा।
22. 'तीसरी कसम' फिल्म को भारत सरकार के किस सर्वोच्च फिल्म पुरस्कार से सम्मानित किया गया था?
 अ) फिल्मफेयर पुरस्कार
 ब) राष्ट्रपति स्वर्णपदक और राष्ट्रीय पुरस्कार
 क) ऑस्कर पुरस्कार
 ड) आईफा (IIFA) पुरस्कार
23. 'आँधी' फिल्म कमलेश्वर के किस उपन्यास पर आधारित है?
 अ) आगामी अतीत
 ब) काली आँधी
 क) कितने पाकिस्तान
 ड) डाकबंगला
24. फिल्म 'आँधी' का निर्देशन किसने किया था?
 अ) कमलेश्वर
 ब) आर. डी. बर्मन
 क) गुलजार
 ड) संजीव कुमार
25. फिल्म में नायिका 'आरती देवी' का चरित्रांकन भारत की किस पूर्व प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व से मेल खाता है?
 अ) श्रीमती इंदिरा गांधी
 ब) श्रीमती प्रतिभा पाटिल
 क) सुश्री मायावती
 ड) इनमें से कोई नहीं
26. उपन्यास में जहाँ नायक का नाम 'जग्गी बाबू' है, वहीं फिल्म में उसका नाम क्या रखा गया है?
 अ) के. बोस
 ब) गुरुशरण
 क) जे. के.
 ड) ब्रिंदा
27. फिल्म 'आँधी' को किस वर्ष फिल्मफेयर पुरस्कार से सम्मानित किया गया था?
 अ) 1974
 ब) 1975
 क) 1976
 ड) 1978

28. 'आँधी' फिल्म की कथावस्तु के केंद्र में क्या है?
 अ) एक सफल व्यापार की कहानी
 ब) एक असफल दाम्पत्य (पारिवारिक रिश्तों) की करुण कहानी
 क) केवल दो दोस्तों की कहानी
 ड) एक जासूसी कहानी
29. आँधी फिल्म में आरती देवी और जे. के. की इकलौती बेटी का नाम क्या है?
 अ) मालती
 ब) मुन्नी
 क) ईरा
 ड) दीपा
30. आँधी फिल्म में घर का पुराना और महत्वपूर्ण सेवक (नौकर) कौन है?
 अ) चंद्रसेन
 ब) जग्गी बाबू
 क) ब्रिंदा काका
 ड) गुरुशरण
31. 'रजनीगंधा' फिल्म मन्नू भंडारी की किस प्रसिद्ध कहानी पर आधारित है?
 अ) एक कहानी यह भी
 ब) यही सच है
 क) त्रिशंकु
 ड) आपका बंटी
32. फिल्म 'रजनीगंधा' का निर्देशन किसने किया था?
 अ) सुरेश जिंदल
 ब) अमोल पालेकर
 क) बासु चटर्जी
 ड) योगेश
33. दीपा दिल्ली से इंटरव्यू के लिए किस शहर जाती है?
 अ) कोलकाता
 ब) मुंबई
 क) चेन्नई
 ड) लखनऊ
34. संजय जब भी दीपा से मिलता था, तो उसे कौन-से फूल देता था?
 अ) गुलाब
 ब) चमेली
 क) रजनीगंधा
 ड) गेंदा
35. दीपा के मन में संजय और नवीन को लेकर जो स्थिति पैदा होती है, उसे क्या कहा गया है?
 अ) आनंद
 ब) द्वंद्व (मानसिक टकराव)
 क) संतोष
 ड) घृणा

36. फिल्म 'रजनीगंधा' को किस वर्ष फिल्मफेयर अवार्ड मिला था?
- | | |
|---------|---------|
| अ) 1974 | ब) 1975 |
| क) 1976 | ड) 1980 |

2.5 पारिभाषिक शब्द, शब्दार्थ

1. जनसंचार माध्यम - सूचनाओं, विचारों और मनोरंजन को एक साथ बहुत बड़े जनसमूह (जनता) तक पहुँचाने वाले साधन;
2. प्रयोजन - किसी कार्य को करने का उद्देश्य, मतलब, लक्ष्य या कारण।
3. मर्मस्पर्शी - दिल को छू लेने वाला; जो मन या भावनाओं को गहराई से प्रभावित करे।
4. जज्बा - किसी काम को करने की तीव्र भावना, जोश, उत्साह या आंतरिक इच्छा।
5. बॉलीवुड - मुंबई (बॉम्बे) में स्थित हिंदी भाषा का फिल्म उद्योग।
6. संवहन - किसी विचार, संदेश, ऊर्जा या वस्तु को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने या ले जाने की प्रक्रिया।
7. फिल्म निर्देशक - वह व्यक्ति जो फिल्म के निर्माण का नेतृत्व करता है, अभिनेताओं को निर्देश देता है और कहानी को परदे पर जीवंत रूप देता है।
8. बाजारीकरण - किसी वस्तु, कला, भावना या सेवा को पूरी तरह से व्यापार या लाभ कमाने के उद्देश्य से बाजार की वस्तु बना देना।
9. कालजयी - समय को जीतने वाला, जो हर युग में प्रासंगिक रहे।
10. सदमा - गहरा मानसिक आघात या मानसिक ठेस।
11. निश्चल - जिसमें कोई छल-कपट या चालाकी न हो, बिल्कुल साफ दिल का।
12. अदम्य साहस - ऐसा साहस जिसे दबाया न जा सके, बहुत बड़ा हौसला।
13. हड़बड़ाकर - अचानक घबराकर या चौंककर उठना।
14. समयबद्ध - समय का पाबंद, जो हर काम नियत समय पर करे।
15. उत्कर्ष - श्रेष्ठता, किसी भावना या कला का सबसे ऊँचा स्तर।
16. आंचलिक - किसी विशेष क्षेत्र या अंचल (जैसे किसी ग्रामीण इलाके) की संस्कृति, भाषा और जनजीवन से संबंधित।
17. कहानी संग्रह - वह पुस्तक जिसमें एक ही लेखक की कई कहानियों को एक साथ प्रकाशित किया जाता है।
18. रसग्रहण - किसी कलाकृति, साहित्य या फिल्म के आनंद, सौंदर्य और उसके गहरे अर्थ को महसूस करना।
19. वासना - शारीरिक या भौतिक आकर्षण की तीव्र इच्छा।
20. कुर्बानी - किसी बड़ी मजबूरी या दूसरों की भलाई के लिए अपनी सबसे प्रिय वस्तु या भावना का त्याग करना।

21. प्रतीक - किसी गहरे भाव, विचार या लक्षण को दर्शाने वाला चिह्न या माध्यम।
22. निशब्दता - पूरी तरह से सन्नाटा छा जाना; जहाँ बोलने के लिए शब्द ही न बचें।
23. कथावस्तु विन्यास - कहानी के ताने-बाने या घटनाओं को क्रमबद्ध तरीके से व्यवस्थित करने की कला।
24. महत्वाकांक्षी - जीवन में बहुत बड़ा पद, प्रतिष्ठा या ऊँचा स्थान पाने की तीव्र इच्छा रखने वाला।
25. अवश्यंभावी - जिसका होना बिल्कुल निश्चित हो; जिसे टाला न जा सके।
26. पूँजीवादी व्यवस्था - वह आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था जिसमें उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व होता है और लाभ कमाना मुख्य उद्देश्य होता है।
27. अंतर्द्वंद्व - मन के भीतर चलने वाला विचारों या भावनाओं का संघर्ष; भीतरी खींचतान।
28. त्रासदी - अत्यंत दुखद या कष्टपूर्ण घटना; ऐसी कहानी जिसका अंत दुखद हो।
29. यथार्थ - जो जैसा है वैसा ही होना; वास्तविकता या सच।
30. पटकथा - फिल्म या नाटक के लिए लिखा जाने वाला वह दृश्य-वार ब्यौरा जिसमें संवाद और कैमरे के मूवमेंट शामिल होते हैं।
31. संवाद - दो या दो से अधिक पात्रों के बीच होने वाली बातचीत या बातचीत के बोल।
32. पार्श्वगायक - परदे के पीछे से गाने वाला गायक, जिसके गाए गाने पर अभिनेता परदे पर होंठ हिलाते हैं।
33. अवचेतन मन (Subconscious Mind) मन का वह हिस्सा जो पूरी तरह जाग्रत नहीं होता, लेकिन जिसमें हमारी पुरानी यादें, इच्छाएं और डर छिपे रहते हैं (जैसे सपने आना)।
34. त्रिकोणीय संबंध - ऐसा प्रेम संबंध जिसमें तीन लोग (जैसे एक स्त्री और दो पुरुष) शामिल हों।
35. संवेदना - दूसरों के सुख-दुख या मन के भावों को गहराई से महसूस करने की क्षमता।

2.6 स्वयं अध्ययन प्रश्नों के उत्तर

अ)

1. नवीनतम
2. सिनेमा
3. दृश्य-श्रव्य
4. साहित्य
5. आशा का संचार करता है
6. साधारणीकरण द्वारा
7. उन व्यक्तियों में महान गुणों का होना आवश्यक है।
8. क्योंकि यह देश, राष्ट्र, वर्ग आदि की संकुचित भावनाओं की परिधि से बाहर निकालता है
9. सिनेमा
10. क्योंकि इसमें साहित्य, चित्रकला, संगीत, नाट्य और नृत्यकला सभी का समावेश होता है

11. जन सरोकार, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संचेतना का निर्माण करना
12. जनक्रोश एवं विद्रोह को हथियार बनाकर इनके विरुद्ध माहौल तैयार करने में
13. इन्होंने देश की क्षेत्रीय या देशज भाषाओं एवं राष्ट्रभाषा हिंदी को निकट लाने का कार्य किया है
14. कमलेश्वर
15. मारे गए गुलफाम
16. शैलेंद्र
17. राजकपूर और वहीदा रहमान
18. वह कभी चोरी-चकारी का माल गाड़ी में नहीं लादेगा
19. बांस लदी गाड़ी के टकराने और मारपीट होने पर
20. चंपा
21. अपनी गाड़ी पर कभी नौटंकी वाली (कंपनी की औरत) को नहीं बैठाएगा
22. राष्ट्रपति स्वर्णपदक और राष्ट्रीय पुरस्कार
23. काली आँधी
24. गुलजार
25. श्रीमती इंदिरा गांधी
26. जे. के.
27. 1976
28. एक असफल दाम्पत्य (पारिवारिक रिश्तों) की करुण कहानी
29. मुन्नी
30. ब्रिंदा काका
31. यही सच है
32. बासु चटर्जी
33. मुंबई
34. रजनीगंधा
35. द्वंद्व (मानसिक टकराव)
36. 1975

2.7 सारांश –

इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य और सिनेमा कला के दो अलग-अलग माध्यम हैं। सिनेमा और साहित्य दोनों भिन्न माध्यम होते हुए भी परस्पर पूरक हैं। ऊपरी तौर पर देखेंगे तो साहित्य और सिनेमा का स्वरूप एक-दूसरे से काफी भिन्न है। साहित्य शब्दों पर आश्रित है तो सिनेमा दृश्य-श्रव्य माध्यम है। साहित्य कलम पर तो सिनेमा कैमरे पर निर्भर है। साहित्य की परिभाषाएँ और उसके तत्त्वों से उसके स्वरूप को समझने में थोड़ी बहुत मदद मिलती है लेकिन उससे साहित्य का स्वरूप पूरी तरह से स्पष्ट नहीं होता। वहीं बात सिनेमा की भी है। सिनेमा कला और विज्ञान का संमिश्रण है। सिनेमा का तकनीकी पक्ष और कला पक्ष समझने पर हमें सिनेमा के स्वरूप का परिचय होता है, लेकिन वह परिचय भी पर्याप्त नहीं है। ऐसा लगता है कि साहित्य और सिनेमा को परिभाषा में बाँधना बहुत ही मुश्किल कार्य है। किसी भी परिभाषा से हमें साहित्य और सिनेमा की सर्वांगीण जानकारी का पता नहीं चलता। इन दोनों कलाओं का स्वरूप इतना व्यापक है कि उनके स्वरूप को संपूर्ण रूप से स्पष्ट करने में मर्यादाएँ पड़ जाती हैं। फिर भी साहित्य और सिनेमा के स्वरूप को स्पष्ट करने की कोशिश इस अध्याय के अंतर्गत की गई है। साहित्य और सिनेमा के जो अंतर्निहित तत्त्व हैं उनके माध्यम से हमने दोनों कलाओं को समझने का प्रयास किया है। सिनेमा के तकनीकी पक्ष को अगर हम अलग रखें तो सिनेमा का कला पक्ष और साहित्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों में बहुत कुछ समानताएँ हमें नजर आती हैं। सिनेमा एवं साहित्य वस्तुतः दोनों ही कला विधाओं में प्रस्तुतीकरण के स्तर पर भले ही भिन्नता हो परन्तु कुछ मूलभूत बिंदुओं पर समानता दिखाई देती है। साहित्य में जहाँ विभिन्न विधाएँ—कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता, आत्मकथा इत्यादि उसके स्वरूप को निर्धारित करती हैं, वहीं सिनेमा में साहित्य की विविध विधाओं एवं अन्य कला विधाओं का सुंदर समायोजन होता है।

साहित्य और सिनेमा के महत्त्व को हमने समाज के परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास किया तो सबसे महत्त्वपूर्ण जो बात सामने आयी वह यह है कि साहित्य और सिनेमा ने समाज से शुरू से ही अपना अभिन्न नाता जोड़ लिया है। साहित्य और सिनेमा को हम समाज से अलग देख ही नहीं सकते। साहित्यकारों और फिल्म निर्देशकों ने हमेशा समाज को आईना दिखाने का कार्य किया है। समाज में पनप रही बुराइयों पर अपने-अपने माध्यम से कड़ा प्रहार किया है। मनोरंजन के साथ-साथ उपदेश का मर्म भी लोगों तक पहुँचाया है। दुःखी, पीड़ित लोगों के चेहरे पर मुस्कान बिखरने का प्रयास किया है। निराश मन में प्रेरणा और उत्साह भरने का कार्य किया है। समाज की विभिन्न समस्याओं को हमारे सामने रखकर अपने-अपने तरीके से उसका समाधान प्रस्तुत करने की चेष्टा भी की है। साहित्य और सिनेमा भले ही भिन्न माध्यम हो लेकिन दोनों के केंद्र में 'समाज' ही है। समाज की समस्याएँ हैं, समाज के प्रश्न हैं। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव ग्रहण करते हुए इन दोनों माध्यमों ने समय-समय पर इस पर टिप्पणी की है। आम आदमी के दर्द को अभिव्यक्ति दी है और समाज की कुछ अनसुलझी समस्याओं का समाधान अपने माध्यम से करने का प्रयास भी किया है। भले ही कभी-कभी इनका तरीका कानूनन नहीं है, लेकिन समस्या का काल्पनिक समाधान पाकर थोड़ी देर के लिए क्यों न हो लोग आत्मिक आनंद का अनुभव करते हैं, यह भी कुछ कम नहीं है। कई बार साहित्य और सिनेमा से प्रेरणा पाकर लोगों ने व्यवस्था के खिलाफ आंदोलन भी किए हैं, इतिहास इस बात का गवाह है।

साहित्य और सिनेमा की ताकत बहुत बड़ी है। समाज में इन दोनों माध्यमों का महत्त्व बहुत ज्यादा है। साहित्य, सिनेमा और समाज एक दूसरे से अभिन्न रूप में जुड़े हैं। साथ ही परस्पर पूरक भी हैं। समय-समय पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं और प्रभावित भी होते हैं। साहित्य और सिनेमा ने समाज और राष्ट्र निर्माण में

अपना-अपना अनमोल योगदान दिया है। समाज का मार्गदर्शन किया है। इससे हमें इन दोनों माध्यमों की महत्ता का पता चलता है। साहित्य, संगीत, अभिनय और आधुनिक तकनीक के मेल से सिनेमा का निर्माण होता है, जिसका मुख्य आधार 'कथावस्तु' है। जहाँ साहित्य के आनंद के लिए शिक्षित होना जरूरी है, वहीं सिनेमा अपनी दृश्य-श्रव्य शक्ति के कारण समाज के पढ़े-लिखे और अनपढ़ दोनों वर्गों तक पहुँचता है। शुरुआत में प्रेमचंद और भगवतीचरण वर्मा जैसे महान लेखक सिनेमा से निराश होकर लौटे, परंतु आगे चलकर फणीश्वरनाथ रेणु, कमलेश्वर और मन्नू भंडारी जैसे रचनाकारों की कालजयी कृतियों पर बेहतरीन फिल्मों का निर्माण हुआ।

1. तीसरी कसम (लेखक: फणीश्वरनाथ रेणु): पृष्ठभूमि: यह फिल्म रेणु जी की आंचलिक कहानी 'मारे गए गुलफाम' पर आधारित है, जिसका निर्देशन बासु भट्टाचार्य ने किया और निर्माता गीतकार शैलेंद्र थे। कथानक व संवेदना: यह फिल्म एक सीधे-साधे बैलगाड़ी चालक हीरामन (राजकपूर) और नौटंकी कलाकार हीराबाई (वहीदा रहमान) के बीच उपजे निश्छल और पवित्र प्रेम की कहानी है। हीरामन इससे पहले चोरबाजारी का माल और बाँस न लादने की दो कसमें खा चुका था। निष्कर्ष: हीराबाई को अपनी गाड़ी में बिठाने के बाद उसके मन में एक आत्मीय भाव जागता है, जो वासना से कोसों दूर है। अंत में, सामाजिक दबावों और जमींदार के डर के कारण जब हीराबाई हमेशा के लिए चली जाती है, तो दुखी हीरामन अपनी जिंदगी की 'तीसरी कसम' खाता है कि वह कभी अपनी गाड़ी में नौटंकी वाली औरत को नहीं बिठाएगा। यह कसम उसके कभी न पूरे होने वाले अधूरे प्रेम का प्रतीक है।

2. आँधी (लेखक: कमलेश्वर): पृष्ठभूमि: कमलेश्वर के उपन्यास 'काली आँधी' पर गुलजार के निर्देशन में १९७५ में यह फिल्म बनी। नायिका का चरित्रांकन देश की पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से मेल खाने के कारण फिल्म को विरोध का सामना भी करना पड़ा। कथानक व संवेदना: यह स्वार्थलिप्त राजनीति और टूटते पारिवारिक रिश्तों के बीच पीसते किरदारों की कहानी है। फिल्म की नायिका आरती देवी (सुचित्रा सेन) एक महत्वाकांक्षी राजनेता है, जबकि उसका पति जे.के. (संजीव कुमार) एक सरल होटल मैनेजर है जो भ्रष्ट राजनीति से घृणा करता है। निष्कर्ष: सत्ता के शिखर पर पहुँचने के लिए एक स्त्री को अपनी निजी जिंदगी की जो कीमत चुकानी पड़ती है, फिल्म उसे बेहद परिपक्वता से दिखाती है। बरसों बाद मिलने पर दोनों का मौन और ठहरा हुआ दर्द दर्शकों को छू जाता है। आर.डी. बर्मन का संगीत और गुलजार के गीत किरदारों के अंतर्द्वंद्व को खूबसूरती से बयाँ करते हैं।

3. रजनीगंधा (लेखिका: मन्नू भंडारी): पृष्ठभूमि: बासु चटर्जी के निर्देशन में बनी यह फिल्म मन्नू भंडारी की प्रसिद्ध कहानी 'यही सच है' पर आधारित है, जो मध्यमवर्गीय सिनेमा की एक बेहतरीन शुरुआत थी। कथानक व संवेदना: यह कहानी एक आधुनिक स्त्री दीपा (विद्या सिन्हा) के मानसिक द्वंद्व और त्रिकोणीय प्रेम पर आधारित है। दीपा दिल्ली में संजय (अमोल पालेकर) से प्रेम करती है, जो हमेशा देर से आता है पर रजनीगंधा के फूल देकर उसकी नाराजगी दूर कर देता है। जब दीपा इंटरव्यू के लिए मुंबई जाती है, तो वहाँ उसका पुराना प्रेमी नवीन (दिनेश ठाकुर) उसकी मदद करता है, जो बेहद समयबद्ध और कला-पारखी है। निष्कर्ष: दीपा दोनों पुरुषों के स्वभाव और प्रेम की तुलना करते हुए द्वंद्व में घिर जाती है। अंत में, जब नवीन का सफलता का तार आता है, ठीक उसी समय संजय हाथ में रजनीगंधा के फूल लिए सामने खड़ा होता है। संजय को देखते ही दीपा के हाथ से तार गिर जाता है और उसे अहसास होता है कि संजय का प्रत्यक्ष प्रेम ही वास्तविक सत्य है, जबकि नवीन के साथ का विचार केवल एक काल्पनिक दुनिया थी।

2. 8 स्वाध्याय

i) लघुत्तरीय प्रश्न ।

- 1: साहित्य के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए
- 2: साहित्य और समाज के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
- 3: सिनेमा के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए
- 4: सिनेमा और समाज के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
- 5: साहित्य के रसास्वादन के लिए सुशिक्षित होने की आवश्यकता होती है, पर सिनेमा समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचता है। इस कथन को स्पष्ट कीजिए।
- 6: हीरामन ने अपनी जिंदगी में कौन-कौन सी तीन कसमें खाई थीं ?
- 7: फिल्म 'आँधी' में आरती देवी और जे.के. के संबंधों में जो दाम्पत्य बिखराव दिखाया गया है, उसका मुख्य कारण क्या था ?

ii) दीर्घत्तरीय प्रश्न।

- 1: साहित्य और सिनेमा का अंतरसम्बन्ध स्पष्ट कीजिए।
- 2: साहित्य, सिनेमा और समाज की समीक्षा कीजिए।
- 3: फणीश्वरनाथ 'रेणु' की कहानी पर आधारित फिल्म 'तीसरी कसम' के आधार पर हीरामन और हीराबाई के मूक प्रेम का संवेदनात्मक रसग्रहण कीजिए।
- 4: कमलेश्वर के उपन्यास पर आधारित फिल्म 'आँधी' के आधार पर स्वार्थलिस राजनीति और टूटते पारिवारिक रिश्तों को स्पष्ट कीजिए।
- 5: मन्नू भंडारी की कहानी 'यही सच है' पर आधारित फिल्म 'रजनीगंधा' के आलोक में नायिका दीपा के मानसिक द्वंद्व और उसके अंतिम निर्णय की तर्कपूर्ण समीक्षा कीजिए।

2.9 क्षेत्रीय कार्य

1. 'तीसरी कसम' का शीर्षक: हीरामन द्वारा खाई गई तीनों कसमों की सूची बनाइए और विश्लेषण कीजिए।
2. स्त्री अस्मिता और राजनीति: फिल्म 'आँधी' के आलोक में सामना मराठी फिल्म का विश्लेषण कीजिए।
3. 'यही सच है' का अर्थ: 'रजनीगंधा' फिल्म के अंत में दीपा के हाथ से नवीन का तार क्यों गिर जाता है? उसके इस निर्णय से कहानी के शीर्षक 'यही सच है' का क्या संबंध है?

2.10 अतिरिक्त अध्ययन के लिए

1. फणीश्वरनाथ रेणु का कहानी संग्रह 'ठुमरी' (विशेषकर कहानी: 'मारे गए गुलफाम')।
2. कमलेश्वर का मूल उपन्यास 'काली आँधी' (यह समझने के लिए कि गुलजार की फिल्म और उपन्यास में क्या अंतर था)।

3. मन्नू भंडारी की प्रसिद्ध कहानी 'यही सच है' तथा उनकी आत्मकथा 'एक कहानी यह भी'।
4. गोदान : मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास, शतरंज के खिलाड़ी: प्रेमचंद की कहानी पर महान निर्देशक सत्यजीत रे द्वारा बनाई गई फिल्म, पिंजर: अमृता प्रीतम के उपन्यास और देवदास: शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के उपन्यास पर आधारित हिंदी फिल्म ।
5. साहित्य और सिनेमा : शत्रुघ्न प्रसाद, खद्र पब्लिकेशन, 2024
6. साहित्य और सिनेमा : प्रो. रमा, नयी किताब पब्लिकेशन, 2025
7. साहित्य और सिनेमा : भारती गोरे, नयी किताब पब्लिकेशन, 2023

